B. A Ist Semester Paper Code - A080101TN
Paper — Principles of Micro Economics

अर्थव्यवस्था की मूलभूत समस्याऐं क्या है -
अर्थव्यवस्था की केन्द्रीय समस्या क्या है -
what are the basic problems of an Economy?

अर्थ व्यवस्था दो मूल तत्वों पर आधारित हैं प्रथम यह हैं कि वस्तुओं एवं सेवाओं के लिए मानवीय आवश्यकताएं अनन्त है, दूसरा उत्पादन के साधन जिनसे वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन किया जाता हैं दुर्लभ या सीमित हैं मनुष्य की आवश्यकताएं असीमित है और हमारे साधन सीमित होने के कारण मानव अपनी सभी आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर सकते। इसलिए अर्थव्यवस्था को यह निर्णय करना होता है कि दुर्लभ साधन का कैसे प्रयोग किया जाय जिससे समाज को अधिकतम संतुष्टि प्राप्त हो सके, ऐसा करते समय अर्थव्यवस्था की कुल मौलिक या मूलभूत समस्याओं जिन्हे अर्थव्यवस्था की केन्द्रीय समस्या भी कहा जाता है जो इस प्रकार है -

1 - क्या उत्पादन किया जाय।
2 कैसे उत्पादन किया जाय
3 किसके लिए उत्पादन किया जाय
4 कितना उत्पादन किया जाय
5 आर्थिक विकास कैसे किया जाय

यह चुनाव की समस्या ही अर्थव्यवस्था की आर्थिक समस्या है

(2)

अर्थशास्त्र का क्षेत्र तथा उसका स्वभाव
Scope and Nature of Education

अर्थशास्त्र का क्षेत्र परिस्थितियां तथा समस्याओं के अनुसार नदी के किनारों की तरह सदैव परिवर्तनशील हैं समुद्र के तट समान अपरिवर्तनशील नहीं। अर्थशास्त्र में अध्ययन की जाने वाली मानवीय आर्थिक कल्याण से सम्बधित आर्थिक क्रियाओ को वर्तमान साधनों के आवंटन की समस्या तथा उत्पादन के साधनो की वृद्धि की समस्या। अर्थशास्त्र का यह क्षेत्र बहुत व्यापक हैं इसमें यह देखा जाता हैं कि अर्थव्यवस्था में उपलब्ध सभी साधनो का क्या पूर्ण प्रयोग हो चुका हैं; साधनों के आवंटन की समस्या या उत्पादन-साधनों द्वारा किन वस्तुओं का उत्पादन किया जाय, वस्तुओं के उत्पादन की विधि क्या हो, समाज के विभिन्न वर्गो के बीच राष्ट्रीय उत्पाद का वितरण किस प्रकार हो। साधनों के अनुकूलतम प्रयोग की समस्या अर्थव्यवस्था की उत्पादन-क्षमता में वृद्धि हो रही है या कमी आदि क्षेत्रो के अन्तर्गत अध्ययन करता है।

अर्थशास्त्र का स्वभाव में यह अध्ययन किया जाता है कि क्या अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला अथवा कला। विज्ञान दोनो है। यदि बात किया जाय तो अर्थशास्त्र विज्ञान है क्योंकि यहां पर भी वैज्ञानिक विधियों का पालन, पर्यवेक्षण, तथ्यों का एकत्रीकरण विश्लेषण आदि अर्थशास्त्र के अंदर होता हैं अर्थशास्त्र को कला भी कहा जा सकता है क्योंकि किसी कार्य को बेहतर ढंग से प्रस्तुतीकरण करना कला कहा जाता हैं यह ज्ञान को व्यवहार में लाने के सर्वोत्तम ढंग पर प्रकाश डालती हैं। क्रमबद्धता ज्ञान प्राप्त करते है विज्ञान है पर उस बात का क्रमबद्ध तथा उत्तम प्रयोग ही कला हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अर्थशास्त्र कला और विज्ञान दोनो हैं।

सूक्ष्म अर्थशास्त्र या
व्यष्टि अर्थशास्त्र (Micro Economics)

अर्थशास्त्र की विषय सामग्री को दो भागो में विभाजित किया गया है व्यष्टि अर्थशास्त्र एवं समष्टि अर्थशास्त्र. शब्द का प्रयोग नार्वे के अर्थशास्त्री रेग्नर फ्रिश ने 1933 में प्रथम बार प्रयोग किया था Micro शब्द ग्रीक भाषा के Mikros से बना है जिसका अर्थ सूक्ष्म या छोटा से लगाया जाता है अर्थव्यवस्था में सूक्ष्म इकाइयों जैसे व्यक्तिगत उपभोक्ताओं, व्यक्तिगत फर्म, व्यक्तिगत आय आदि का अध्ययन किया जाता है व्यक्ति और व्यक्तियों के छोटे समूहो की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है प्रो० बोल्डिंग के अनुसार

" विशेष फर्म, विशेष परिवारों, व्यक्तिगत कीमतें, मजदूरी आय, व्यक्तिगत उद्योगों तथा विशेष वस्तुओं का अध्ययन व्यष्टि अर्थशास्त्र कहलाता है।"

किसी जंगल में एक-एक वृक्ष का अध्ययन सूक्ष्म या व्यष्टि अर्थशास्त्र का अध्ययन कहा जाता है।

प्रो० बोल्डिंग ने व्यष्टि तथा समष्टि अर्थशास्त्र में एक वृक्ष तथा एक जंगल उदाहरण दिया है जंगल में एक-एक वृक्ष का अध्ययन ~~करना ही~~ करने के समान अर्थव्यवस्था में असंख्य व्यक्तियो का अध्ययन किया जाता है

(4)

समष्टि अर्थशास्त्र या वृहद या व्यापक अर्थशास्त्र
Macroeconomics

समष्टि अर्थशास्त्र Macro शब्द ग्रीक भाषा के Makros से बना है जिसका अर्थ वृहद या विशाल से लगाया जाता हैं समष्टि अर्थशास्त्र में सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था तथा इसके वृहद समूहो जैसे राष्ट्रीय आय, कुल रोजगार कुल उपभोग, कुल निवेश, कुल बचत, सामान्य कीमत स्तर, कुल मुद्रास्फीति, कुल बेरोजगारी आदि का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाता हैं समष्टि अर्थशास्त्र व्यक्तिगत मात्राओं का अध्ययन नहीं करता हैं बल्कि इन मात्राओं के समूहो का अध्ययन किया जाता हैं इस प्रकार समष्टि अर्थशास्त्र विशाल आर्थिक क्रियाओं से हैं।

जी एक्ले के अनुसार "समष्टि अर्थशास्त्र उन शक्तियों तथा कारको का अध्ययन हैं जो अर्थव्यवस्था में समग्र उत्पादन, रोजगार तथा मूल्य के स्तर तथा समयावधि में उनके वृद्धि की दर को निर्धारित करते हैं।" उदाहरण - जब हम एक वस्तु की इकाई के मूल्य की बात करते हैं तो विश्लेषण व्यष्टि भावी होगा पर जब हम विभिन्न वस्तुओं के मूल्य स्तर की बात करे तो विश्लेषण समष्टि होगा जब एक उपभोक्ता की बात करे तो व्यष्टि होगा इसके साथ जब उपभोक्ता वर्ग की ~~समस्या~~ समस्या की बात करे तो समष्टि होगा

इस प्रकार औद्योगिक नीति, व्यापारिक नीति रोजगार नीति, मौद्रिक तथा राजकोषीय नीति की व्याख्या समष्टि विश्लेषण कहा जाता हैं,

(5)

मांग फलन
Demand function

मांग फलन

मांग फलन उपभोक्ता के व्यवहार या किसी वस्तु के सम्बन्ध में उपभोक्ता की मांग में होने वाले परिवर्तन का विश्लेषण करता हैं जबकि उसके व्यवहार को प्रभावित करने वाले चर परिवर्तित हो।

किसी वस्तु की मांग वस्तु के मूल्य(Px), उपभोक्ता की आय(Y), अन्य वस्तुओं का मूल्य(Po) रूचि तथा फैशन(f), सम्पत्ति आदि पर निर्भर करती हैं इनके बीच आश्रितता या फलनात्मक सम्बन्ध होगा जिसे हम मांग फलन कहते हैं इसे इस प्रकार फलन के रूप में व्यक्त कर सकते हैं।

$$Dx = f(Px, Y, P_0, T, W)$$

मांग फलन यह स्पष्ट करता हैं कि यदि हम इन चरो में परिवर्तन करे तो इसका प्रभाव x वस्तु की मांग पर पड़ेगा चरो में परिवर्तन के परिणाम स्वरूप यदि x वस्तु की कीमते गिरती हैं तो x वस्तु की मांग बढ़ती हैं अर्थात अन्य बाते समान रहने पर वस्तु की कीमत Px वस्तु की मांग में विपरित सम्बन्ध होता हैं।

$$Dx = f(Px)$$

मांग के नियम (Law of Demand)

(6) प्रो० मार्शल ने बताया कि उपयोगिता या वस्तुगुण का संख्यात्मक माप सम्भव हैं तथा जैसे-जैसे किसी वस्तु के स्टाक में वृद्धि होती जाती हैं उसकी सीमान्त उपयोगिता में कमी होती जाती हैं। पर उपभोग क्रिया के दौरान मुद्रा की सीमान्त उपयोगिता स्थिर रहती हैं प्रो० मार्शल ने मांग का नियम प्रतिपादन किया तथा यह कहा कि किसी वस्तु की मांगी गयी मात्रा तथा उस वस्तु के मूल्य के बीच विलोम सम्बन्ध पाया जाता हैं अर्थात गिरते हुए मूल्य के साथ मांग का बढ़ना तथा बढ़ते हुए मूल्य के साथ मांग का गिरना मांग का नियम कहलाता हैं।

प्रो० मार्शल के शब्दो में "मांग एक सामान्य नियम हैं किसी वस्तु की अधिक मात्राओं में बिक्री के लिए उसके मूल्य में निश्चित रूप से कमी होनी चाहिए जिससे उसके अधिक क्रेता मिल सके।

$$P_x \propto \frac{1}{Q_x}$$

P = x वस्तु का मूल्य

Q = x वस्तु की मांगी गयी मात्रा

हीरा-पानी का विरोधाभास (7)
(Water-Diamond Paradox)

इसे मूल्य विरोधाभास भी कहा जाता हैं पानी की अपेक्षा हीरे का मूल्य अधिक क्यों होता हैं-
पानी मनुष्य के लिए अधिक उपयोगी इसका प्रयोग मूल्य अधिक हैं जबकि सीमान्त मूल्य कम हैं
हीरा मानव के लिए कम उपयोगी हैं लेकिन इसका सीमान्त मूल्य अधिक है।
विनिमय मूल्य का सम्बन्ध सीमान्त उपयोगिता से है जबकि प्रयोग मूल्य का कुल उपयोगिता से हैं
पानी की कुल उपयोगिता बहुत ऊंची होती हैं क्योंकि इसका प्रयोग मूल्य बहुत अधिक हैं लेकिन इसका विनिमय मूल्य या सीमान्त उपयोगिता बहुत कम हैं जबकि हीरे की कुल उपयोगिता पानी की कुल उपयोगिता से कम हैं लेकिन विनिमय मूल्य सीमान्त उपयोगिता हीरे के लिए अधिक होने के कारण उसका विनिमय मूल्य ऊंचा होता हैं।
सीमान्त उपयोगिता का सम्बन्ध इच्छा की प्रबलता से हैं जबकि कुल उपयोगिता का सम्बन्ध संतुष्टि की सीमा से हैं अतः सीमान्त उपयोगिता अधिक होने के कारण उपभोक्ता अधिक कीमत देने को तैयार हो जाता हैं इसी कारण से हीरे का विनिमय मूल्य अधिक सीमान्त उपयोगिता के कारण ऊंचा होता हैं और पानी की सीमान्त उपयोगिता कम होती हैं कम विनिमय मूल्य होता है।

(8)

व्यष्टि और समष्टि अर्थशास्त्र में अन्तर

सूक्ष्म एवं वृहत अर्थशास्त्र में अन्तर

Micro Economics and

Differentiate between Micro Economics and Macro Economics

* व्यष्टि अर्थशास्त्र उन आर्थिक समस्याओ का अध्ययन करता हैं जो एक आर्थिक इकाई जैसे एक फर्म, एक उपभोक्ता, व्यक्तिगत उपभोक्ता की आय, आदि से सम्बधित होता हैं। जबकि समष्टि अर्थशास्त्र अर्थव्यवस्था की सभी फर्मों की आर्थिक समस्याओं का अध्ययन करती है इसमें
* व्यष्टि अर्थशास्त्र के अध्ययन का केन्द्र साधनो के अनुकूलतम बंटवारे से सम्बधित सिद्धान्तों, समस्याओं और नीतियों का अध्ययन हैं इसके विपरित समष्टि अर्थशास्त्र के अध्ययन का केन्द्र अर्थव्यवस्था में पायी जाने वाली संसाधनों के रोजगार की स्थिति तथा संसाधनों के विकास से सम्बधित सिद्धान्तो, समस्याओं और नीतियों का अध्ययन हैं।
* व्यष्टि अर्थशास्त्र मुख्यतया कीमत निर्धारक से सम्बधित है जबकि समष्टि अर्थशास्त्र की समस्याओं का मुख्य निर्धारक आय हैं।
* व्यष्टि अर्थशास्त्र में उपभोक्ता, उत्पादक, उत्पादन के साधन आदि का अध्ययन होता है जबकि समष्टि अर्थशास्त्र में कुल उपभोग, कुल निवेश, कुल बचत, रोजगार, बेरोजगारी, राष्ट्रीय आय, सामान्य कीमत, मुद्रा स्फीति आदि का अध्ययन किया जाता है
* सूक्ष्म अर्थशास्त्र का आशय छोटा से है जबकि समष्टि का आशय वृहद या बड़ा से है।
*

मांग वक्र और मांग अनुसूची
Demand curve and Demand schedule

एक वस्तु के लिए एक व्यक्ति की मांग को मांग वक्र व मांग अनुसूची के द्वारा व्यक्त किया जाता हैं कीमत और मात्राओं की सूची को मांग अनुसूची द्वारा दिखाना मांग वक्र कहलाता हैं उदाहरण

मांग अनुसूची

कीमत (रु०)	वस्तु x की मात्रा
5	10
4	20
3	30
2	40
1	60

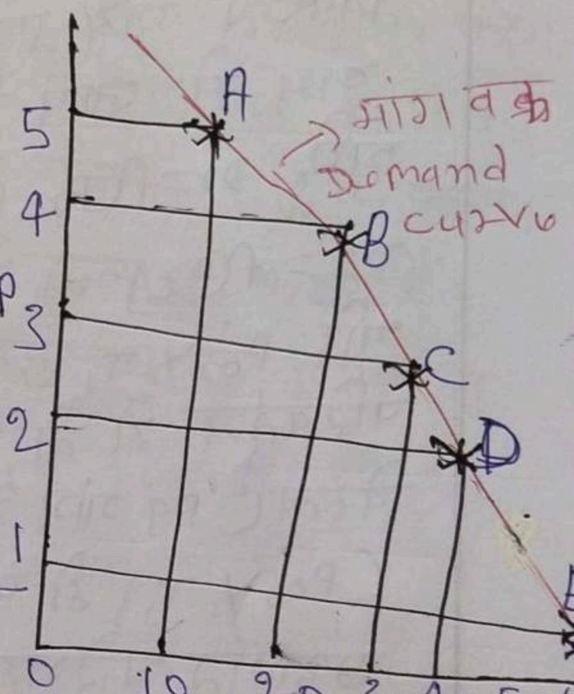

मांग अनुसूची के अनुसार जब कीमत 5 रु० है तो x वस्तु का 10 इकाई मांगी जाती हैं तथा जब कीमत 1 रु० है तब x की मात्रा 60 इकाई मांगी जाती हैं मांग अनुसूची के आधार पर बिन्दु A,B,C,D,E को मिलाती हुई एक रेखा खींची जाती हैं जिसे DD वक्र बनता हैं इसे ही मांग वक्र कहते हैं।

मांग में वृद्धि और मांग में कमी
Demand Increase and Demand Decrease

किसी वस्तु की कीमत में परिवर्तन न होने पर अन्य तत्वों के प्रभाव के कारण कीमत स्थिर रहते हुए भी मांग में परिवर्तन हो जाता है या मांग के अन्य निर्धारक तत्वों में परिवर्तन के कारण एक मूल्य पर मांग अपेक्षाकृत अधिक हो जाय तो मांग वृद्धि (प्रकर्षण) कहेंगे। इसके विपरित जब एक ही मूल्य पर मांग पहले की अपेक्षा कम हो जाय तो मांग में कमी या विकर्षण कहेंगे।

यदि $Dx = f(P_x, P_o, Y, T, \ldots)$ हो और यदि हम मूल्य मांग $Dx = f(P_x)$ की व्याख्या कर रहे तो कह सकते हैं कि यदि $P_o, Y, T, \ldots$ आदि चर अपरिवर्तित हो केवल P_x में परिवर्तन हो तो यह परिवर्तन हो तो यह परिवर्तन मांग में विस्तार एवं मांग में सकुंचन दर्शाता है पर यदि इन चरों में (P_o, Y, T) ही परिवर्तन हो जाय तो मांग में वृद्धि और कमी प्रदर्शित करेगा। या यदि वस्तु की कीमत में परिवर्तन न होने पर अन्य तत्वो (P_o, Y, T) के प्रभाव के कारण कीमत स्थिर रहते हुए भी मांग में परिवर्तन हो जाता है तो इसे मांग में वृद्धि अथवा मांग में कमी कहा जाता है।

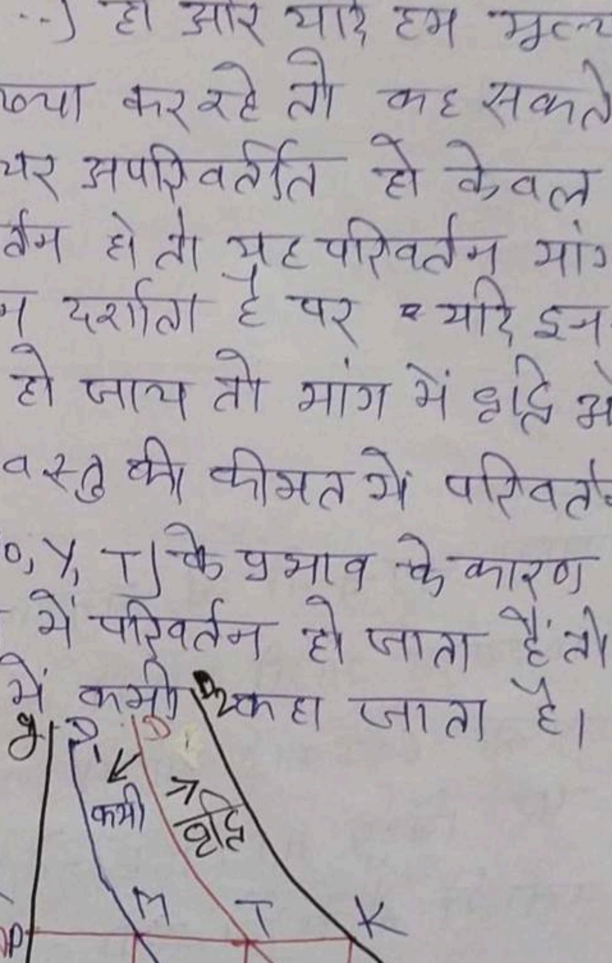

वक्र DD प्रारम्भिक मांग वक्र है यदि यह बढ़कर दायी ओर D_2D_2 हो जाती है तो वस्तु की मात्रा भी बढ़कर Oa से a_2 हो जाती है इसे मांग में वृद्धि कहते हैं इसके विपरित जब मांग वक्र DD से D_1D_1 हो जाती है तो वस्तु की मांगी गयी मात्रा Oa से Oa_1 हो जाती है तो इसे मांग में कमी कहा जाता है यदि मूल मांग वक्र DD से D_2D_2 अर्थात दायी ओर बढ़ना मांग में वृद्धि इसके विपरित D_1D_1 बायी ओर होना कमी प्रदर्शित करता है।

मांग में विस्तार एवं संकुचन
Extention and contraction in Demand

जब मांग में परिवर्तन केवल कीमत में परिवर्तन के कारण होता है तब ये परिवर्तन एक ही मांग वक्र पर घटित होते इस प्रकार के परिवर्तन मांग का विस्तार एवं मांग का संकुचन उत्पन्न करते हैं।

अन्य बातों के समान रहने पर किसी वस्तु की कीमत में कमी के कारण उत्पन्न मांग में वृद्धि को मांग का विस्तार कहते हैं तथा वस्तु की कीमत वृद्धि के कारण मांग की कमी को मांग का संकुचन कहते हैं।

मांग का विस्तार एवं मांग का संकुचन सदैव एक ही मांग वक्र पर उपस्थित होते हैं।

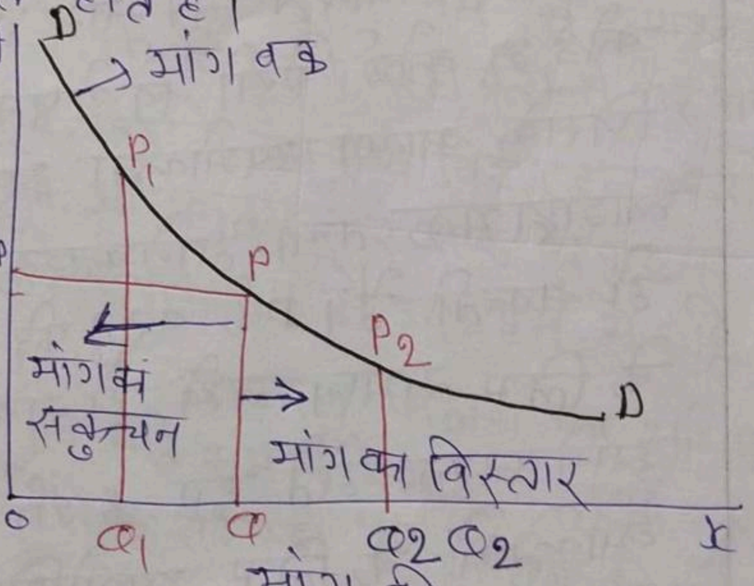

चित्र में DD मांग वक्र है जो प्रारम्भिक वस्तु की कीमत PQ है जहां वस्तु की मांग OQ है जब कीमत P से बढ़कर कीमत P_1Q_1 हो जाता है तब मांग की मात्रा घटकर OQ से OQ_1 हो जाती है अर्थात बायी ओर जाना मांग का संकुचन कहलाता है इसी प्रकार जब कीमत घटकर PQ से P_2Q_2 रह जाती है तब वस्तु की मांग बढ़कर OQ से OQ_2 हो जाती है इसे मांग का विस्तार कहते है दायी ओर जाना विस्तार दर्शाता है।

इस प्रकार मांग का विस्तार एवं संकुचन एक ही मांग वक्र पर बायी ओर जाना संकुचन तथा दायी ओर जाना मांग का विस्तार कहलाता है।

(12)

उपयोगिता क्या है -
What is Utility

वस्तु या सेवा की वह शक्ति, गुण या क्षमता जिससे किसी व्यक्ति की आवश्यकता विशेष की पूर्ति की जा सकती हैं उसे उपयोगिता कहा जाता हैं अर्थात अर्थशास्त्र में किसी वस्तु या सेवा की आवश्यकता पूर्ति की क्षमता या शक्ति को उपयोगिता कहा जाता हैं उपयोगिता एक मनोवैज्ञानिक धारणा हैं आवश्यकता पूर्ति की शक्ति का आशय संतुष्टि से हैं। दूसरे शब्दोंमें उपयोगिता का अर्थ आवश्यकता संतुष्टि शक्ति से हैं अर्थात उपभोक्ता की किसी आवश्यकता विशेष को संतुष्ट करने की निहित क्षमता या शक्ति का नाम ही उपयोगिता हैं प्रत्येक वस्तु में कोई न कोई ऐसी विशेषता अवश्य निहित रहती हैं जिसके कारण उपभोक्ता उसकी मांग करता हैं उपयोगिता लाभदायक तथा हानिकारक दोनो प्रकार की वस्तुओं में हो सकती हैं। एक वस्तु की उपयोगिता प्रत्येक व्यक्ति के लिए समान नहीं हो सकती हैं। मादक पदार्थ हानिकारक होते हुए भी मादक पदार्थ - भोगी व्यक्तियों के लिए उपयोगिता रखते हैं। वस्तु के उपभोग की इच्छा उपयोगिता को जन्म देती हैं।

प्रो० फ्रेजर के अनुसार उपयोगिता केवल इच्छा करना हैं" उपयोगिता इच्छा की तीव्रता का फलन हैं

उत्पादन फलन की परिभाषा दीजिए। (13)
(Define Production function)

एक उत्पादन फलन एक दिये गये समय के लिए उत्पत्ति के साधनों एवं उनके द्वारा उत्पादित उत्पादन की मात्रा के भौतिक सम्बन्ध को बताता है।

$X = f(A; B, C\ D)$

जहां X = फर्म के उत्पादन को तथा A, B, C तथा D विभिन्न उत्पत्ति के साधनो को प्रदर्शित करता है।
उत्पादन फलन ~~उत्पादन~~ एक आर्थिक नहीं परन्तु तकनीकी समस्या है, किसी फर्म का उत्पादन फलन उत्पादन तकनीक पर आधारित होता है एक फर्म उस उत्पादन तकनीक का चुनाव करेगी जिसकी सहायता से वह अपने पास उपलब्ध उत्पत्ति के साधनो का पूर्ण विदोहन करते हुए अपने उत्पादन को अधिकतम कर सके उत्पादन तकनीकी का सुधार निश्चित रूप से उत्पादन में वृद्धि करेगा।
प्रो० लेफ्टविच के अनुसार "उत्पादन फलन का अभिप्राय फर्म के उत्पत्ति साधनों एवं प्रति समय इकाई वस्तुओं और सेवाओं के बीच का भौतिक सम्बद्ध है जबकि कीमतो का समावेश नहीं किया जाता है।"
प्रो० वाटसन के अनुसार "किसी फर्म की भौतिक आगतो तथा उत्पाद की भौतिक मात्रा के बीच के सम्बन्ध को उत्पादन फलन कहते हैं।"

(14)

उत्पादन फलन की विशेषता
(Feature of Production function)

* उत्पादन फलन की निम्नत विशेषता है–
* उत्पादन फलन, उत्पाद तथा उत्पादन के उपादानो के मध्य फलनात्मक सम्बन्ध को प्रदर्शित करता है।
* उत्पाद तथा उ० उपादानों का सम्बन्ध तकनीकी होता है।
* एक उत्पादन फलन किसी एक दिये हुए निश्चित समय अवधि के लिए होता है।
* अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन उत्पादन फलन में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है।
* उत्पादन फलन को सही-सही अध्ययन हेतु उपादानो के गुणों का विवेक से तथा सही अनुमान लगाना आवश्यक होता है,
* उत्पादन फलन मूल्य निरपेक्ष है उत्पादन फलन की कोई मौद्रिक विशेषता नहीं होती हैं अर्थात उत्पादन फलन का सम्बन्ध केवल उत्पादन की भौतिक मात्रा से होता है। वस्तु की कीमत तथा साधनों की कीमतो से यह पूर्णतया स्वतंत्र होता हैं परन्तु ~~यह~~ ये कीमते ही एक फर्म के इस निर्णय को प्रभावित करती हैं कि वह वस्तु का कितनी मात्रा में उत्पादन करेगी।
* उत्पादन फलन के अन्तर्गत साधनो को एक दूसरे के स्थान पर कम या अधिक मात्रा में प्रतिस्थापित किया जाता हैं।
* उत्पादन फलन आर्थिक समस्या न हो कर इन्जीनियरिंग समस्या हैं उत्पादन फलन का कार्य उत्पादन की भौतिक मात्रा तथा साधनों के भौतिक मात्रा के मध्य सम्बन्ध की व्याख्या करना हैं।

(16)

कीमत विभेद
Price Discrimination

एक ही नियन्त्रण के अन्तर्गत उत्पादित एक समान वस्तुओं को विभिन्न क्रेताओं को भिन्न-भिन्न कीमत पर बेचने की क्रिया कीमत विभेद या मूल्य विभेद कही जाती है अर्थात जब एकाधिकारी एक समान वस्तु इकाइयों को वे पृथक-पृथक बाजारो या स्थानो के भिन्न-भिन्न उपभोक्ता को भिन्न-भिन्न कीमत पर बेचता है तब उसकी यह क्रिया कीमत विभेद कहलाती है। कीमत विभेद की सफलता के दो आवश्यक शर्ते है -

1- बाजारो को पृथक रखा जाय।
2 बाजारो में मांग की लोच एक समान नहीं होनी चाहिए।

श्रीमती जोन राबिन्सन के अनुसार " एक ही वस्तु को जिसका उत्पादन एक ही उत्पादक द्वारा किया जाता है, भिन्न-भिन्न क्रेताओं को भिन्न भिन्न मूल्यों पर बेचने की क्रिया को मूल्य-विभेद कहते हैं।"

कभी-कभी विक्रेता मूलतः एक ही वस्तु को थोड़ा सा अन्तर लाकर अलग-अलग मूल्य पर वस्तु की इकाइयां बेचता है जैसे सिनेमा, ट्रेन, क्रिकेट स्टेडियम का टिकट डाक्टर आदि।

सम उत्पाद वक्र क्या है?
What is Iso product curve

सम उत्पाद वक्र दो उत्पत्ति साधनो के एक समान उत्पादन करने वाले अनेक बिन्दुओं का बिन्दु पथ हैं। अलग-अलग समोत्पाद रेखाएं उत्पादन के अलग-अलग स्तर को बताती हैं। समोत्पाद वक्र विश्लेषण भी उत्पादन साधनो के इष्टतम संयोग को ज्ञात करने में सहायक हैं। किसी वस्तु का उत्पादन, उत्पत्ति के विभिन्न साधनो के संयुक्त रूप से कार्य करने का प्रतिफल होता हैं उत्पादन की प्रक्रिया में उत्पादक यह प्रयास करता हैं कि वह कम से कम लागत पर अधिक से अधिक उत्पादन करे। इसके लिए वह विभिन्न साधनो के इस अनुकूलतम संयोग की खोज की समस्या का समाधान सम उत्पाद वक्रो अथवा सम-मात्रा वक्रो की सहायता से किया जा सकता हैं।

एक समउत्पाद वक्र दो साधनो के उन विभिन्न संयोगो को प्रदर्शित करता हैं जिनसे उत्पादन की एक समान मात्रा दो वस्तुओं के उन संयोगो को व्यक्त करता हैं जिनसे उपभोक्ता को समान संतुष्टि प्राप्त होती हैं उसी तरह सम उत्पाद वक्र दो साधनो के उन विभिन्न संयोगो को दर्शाता हैं जिनसे समान मात्रा में उत्पादन होता हैं।

प्रदर्शित चित्र में IPC सम उत्पाद वक्र हैं यह बाएं से दाएं ऊंचे होते जाते हैं एक सम उत्पाद वक्र पर दूसरे की तुलना में उत्पादन कितना कम या अधिक है

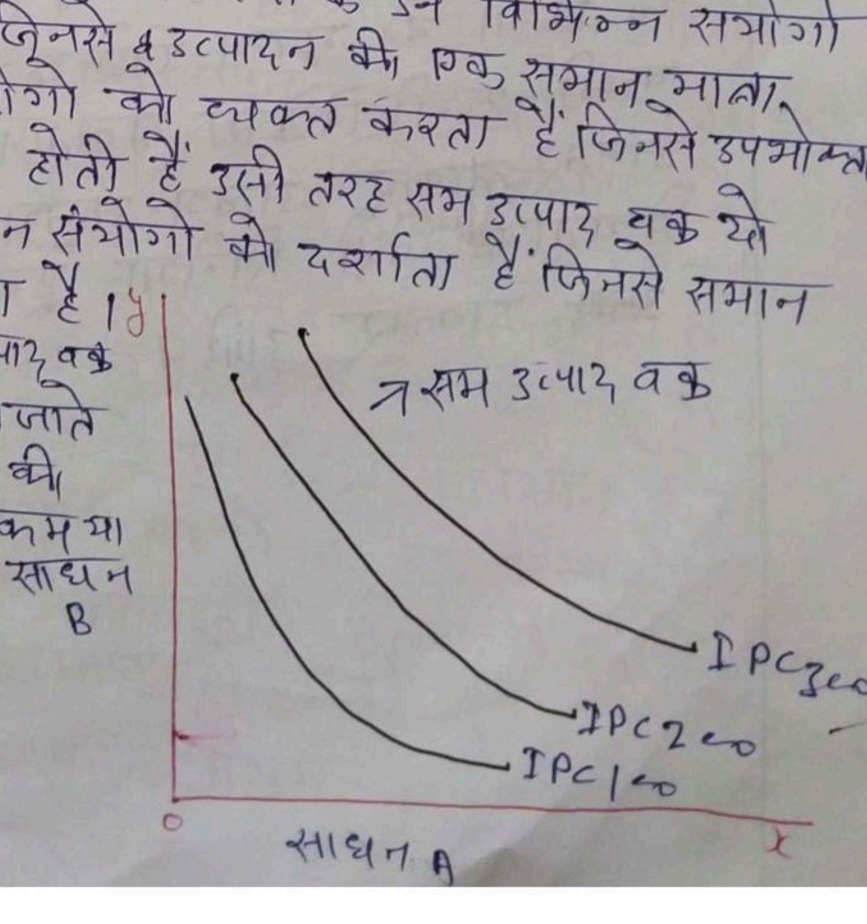

आभास लगान की परिभाषा
Define quasi-rent

आभास-लगान का प्रतिपादन मार्शल ने किया। मार्शल का यह विचार रिकार्डो के लगान सिद्धान्त के ऊपर एक विस्तृत एवं संशोधित तथ्य कहा जा सकता हैं। मार्शल के विचार में अनेक उत्पत्ति के साधनो की पूर्ति अल्प काल में स्थिर या बेलोच होती है। इससे पूर्व रिकार्डो के विचारधारा के अनुसार लगान का सम्बन्ध केवल भूमि से हैं क्योंकि भूमि की पूर्ति पूर्णतः बेलोच होती हैं मार्शल ने इसी बिन्दु पर अपनी असहमति व्यक्त की और बताया कि भूमि के अतिरिक्त उत्पत्ति के अन्य साधन जिन्हे मानव निर्मित कहा जाता हैं, की पूर्ति अल्पकाल में पूर्ण बेलोच हैं मार्शल के विचार में मानव निर्मित पूंजीगत साधनों की पूर्ति भूमि की भांति दीर्घकाल में स्थिर नही होती हैं अतः अल्पकाल में पूंजीगत साधनो द्वारा अर्जित आय को मार्शल ने आभास लगान का नाम दिया। इसप्रकार आभास लगान का विचार केवल उन साधनो से सम्बंधित है जिनकी पूर्ति अल्पकाल में तो स्थिर होती हैं लेकिन दीर्घकाल में बढ़ायी जा सकती हैं जैसे मशीन आदि।

वह आधिक्य जो अल्पकाल में भूमि को छोड़कर मानव निर्मित साधन प्राप्त करते हैं उसे आभास लगान कहा जाता हैं। आभास लगान का विचार एक अल्पकालीन तथ्य है आभास लगान अल्पकालीन अस्थायी आधिक्य हैं जो दीर्घकाल में समाप्त हो जाती हैं।

कुल आभास लगान = कुल आगम − कुल परिवर्तनशील लागत

TQR = TR − TVC

(18)

लाभ का अनिश्चितता वहन सिद्धान्त
Uncertainty Bearing Theory of Profit

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन प्रो० नाइट ने अपनी पुस्तक Risk, Uncertainty and Profit में किया है। प्रो० नाइट इस बात पर बल देते हैं कि उधमी को लाभ उठाने के कारण प्राप्त नही होता बल्कि उत्पादन प्रक्रिया की अनिश्चितता सहन करने के पुरस्कार के रूप में प्राप्त होता हैं प्रो० नाइट ने जोखिम एवं अनिश्चितता में भेद किया है। उनके अनुसार सभी प्रकार के जोखिम उधमी के लिए अनिश्चितता उत्पन्न नहीं करते जोखिम को अनिश्चिता के आधार पर दो भागो में बाटा है-

I- ज्ञात जोखिम (Known Risks)
II अज्ञात जोखिम (Unknown Risks)

उत्पादन प्रक्रिया के दौरान उन जोखिमो को ज्ञात जोखिम कहा जाता जिनका उधमी पूर्वानुमान लगा सकता हैं जैसे आग, बाढ़, चोरी आदि घटनाओं का उधमी को पूर्वानुमान होने के कारण सुरक्षा के उपाय बीमा आदि सेवाओं की सहायता से कर सकता हैं इसे ज्ञात जोखिम को बीमा योग्य जोखिम कहलाते हैं। इसमें अनिश्चिता का घटक उपस्थित नहीं रहता हैं।

उधमी को उत्पादन प्रक्रिया में कुछ ऐसे जोखिम विधमान रहते हैं जिनका उधमी को पूर्वानुमान नहीं होता है ऐसे अनिश्चित जोखिम को अज्ञात जोखिम कहा जाता हैं। प्रो० नाइट ने ऐसे अज्ञात जोखिम को अनिश्चितता की संज्ञा दी हैं ऐसे अनिश्चितता प्रकृति वाले जोखिम बीमा अयोग्य जोखिम कहलाते हैं। जैसे बाजार मांग, कीमत, प्रतियोगिता, बाजार परिस्थितियां, सरकारी नीति यह अनिश्चितता उधमी के साथ सदैव बनी रहती हैं। जिनका पूर्वानुमान उधमी को नहीं ~~रहती~~ होता तथा उधमी उनसे अपनी सुरक्षा का कोई उपाय नहीं कर पाता है। प्रो० नाइट के अनुसार "उधमी को ऐसी अनिश्चिता झेलने का पुरस्कार ही लाभ के रूप में प्राप्त होता हैं।"

मौद्रिक लागत
Money cost

किसी फर्म द्वारा एक वस्तु के उत्पादन में किये गये कुल मुल्य व्यय को मुद्रा लागत कहते हैं दूसरे शब्दो में उत्पत्ति के सम्पत्ति साधनो के मुल्य को यदि मुद्रा में व्यक्त कर दिया जाय तो उत्पादक इन उत्पत्ति के साधन की सेवाओं को प्राप्त करने में जितना कुल व्यय करता हैं मौद्रिक लागत कहा जाता है। इसमें निम्न मद साम्मिलित किया जाता है -

1 - कच्चे माल पर व्यय
2 श्रम की मजदूरी एवं वेतन
3 बड़े उपकरण एवं मशीन पर व्यय
4 पूंजी पर दिया गया ब्याज
5 लगान
6 मशीन की टूट-फुट एवं घिसावट
7 प्रबन्ध व्यय
8 विज्ञापन व्यय
9 यातायात व्यय
10 ईधन व्यय

मौद्रिक लागत दो प्रकार की होती है -

1 - स्पष्ट लागते (Explicit cost)
2 अस्पष्ट लागते (Implicit cost)

स्पष्ट लागत वह लागत होती है जो उत्पादक के द्वारा उत्पत्ति के अनेक साधनो को एकत्रित करने पर स्पष्ट रूप से व्यय की जाती हैं अस्पष्ट या सान्निहित लागतें वे व्यय साम्मिलित किये जाते हैं जिसका उत्पादक को प्रत्यक्ष रूप से भुगतान नहीं करना होता हैं किन्तु उत्पादक उन साधनो का उत्पादन क्रिया में प्रयोग करता हैं क्योंकि साधन उत्पादक के द्वारा स्वयं एकत्रित किये जाते हैं इनमें, उत्पादक की स्वयं की मजदूरी, स्वयं की पूंजी का ब्याज स्वयं की भूमि, बिल्डिंग का किराया आदि

(20)

लाभ का नव-परिवर्तन सिद्धान्त
The Innovation theory of Profit

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन प्रो० शुम्पीटर द्वारा किया गया। शुम्पीटर भी लाभ को गतिशील परिवर्तनों का परिणाम मानते है परन्तु शुम्पीटर क्लार्क द्वारा बताए गये पांच परिवर्तन को लाभ का कारण नहीं मानते। उत्पादन प्रक्रिया में सभी परिवर्तन जिनके कारण लागत कम हो और मांग बढ़े नव-परिवर्तन कहलाते हैं जैसे नई मशीन, नई उत्पादन तकनीक, नए यन्त्रो का प्रयोग, कच्चे माल के नए स्रोतो का मिलना, वस्तु के गुण में वास्तविक व काल्पनिक वृद्धि इन सभी से उत्पादन लागत कम हो सकती हैं या मांग बढ़ सकती हैं अथवा चोनोपोलिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं उत्पादन लागत में कमी या मांग की वृद्धि से लाभ बढ़ता है अविष्कार और नवप्रवर्तन में अन्तर होता हैं किसी व्यक्ति द्वारा नई मशीन या नए यंन्त्र का निर्माण आविष्कार कहलाता हैं, परन्तु इसका उत्पादन में पहला प्रयोग नव-प्रवर्तन कहलाता हैं। नवप्रवर्तन के कारण जो लाभ प्राप्त होता हैं वे अस्थायी प्रकृति के होते हैं।

तरलता जाल
Liquidity Trap

ब्याज का तरलता पसन्दगी सिद्धान्त का प्रतिपादन प्रो० कीन्स ने किया था प्रो० कीन्स के अनुसार "ब्याज दर पूर्णतः एक मौद्रिक घटना है। उनके अनुसार ब्याज की दर मुद्रा की पूर्ति एवं मांग की सापेक्षिक शक्तियों द्वारा निर्धारित होती है प्रो० कीन्स ने मुद्रा की मांग को तरलता पसन्दगी के संदर्भ में बताया है नकद मुद्रा की मांग को तरलता पसन्दगी कहा जाता है मुद्रा को कई रूपो में रखा जा सकता है लेकिन सबसे तरल रूप नकद मुद्रा (Cash money) है क्योंकि इसे हम किसी भी समय इच्छानुसार प्रयोग कर सकते हैं इस प्रकार नकदी को कीन्स ने तरलता का नाम दिया।

तरलता जाल वह अवस्था है, जिसमें सट्टे के लिए मुद्रा की मांग पूर्णतः लोचदार हो जाती है इसे पूर्ण तरलता पसन्दगी या अधिमान की दशा कहते हैं। तरलता जाल न्यूनतम ब्याज दर पर प्राप्त होता है इसे व्यक्ति बाण्ड में निवेश करने की अपेक्षा धन को अपने पास नकदी (Cash) में रखना पसंद करता है। न्यूनतम ब्याज दर पर हानि की आशंका व्यक्तियों को आगे प्रतिभूतियां खरीदने से रोकती है इसका विकल्प अतिरिक्त नकदी को निष्क्रिय सम्पत्ति के रूप में रखना होता है।

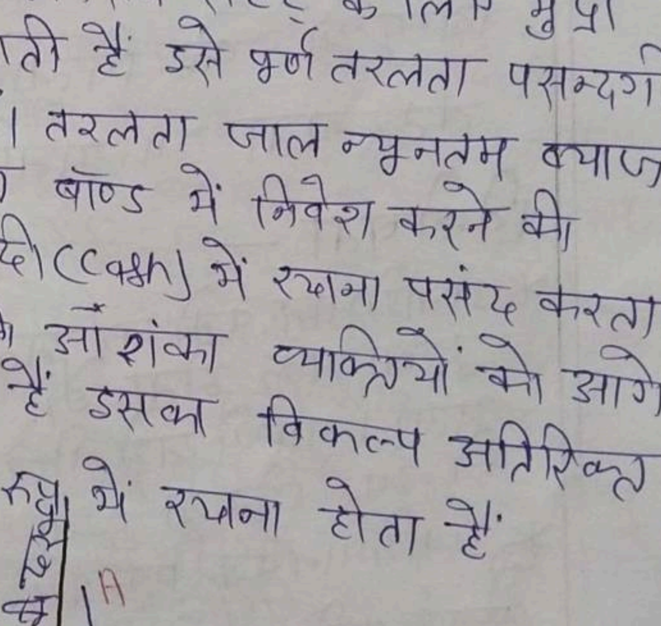

प्रदर्शित चित्र में तरलता पसन्दगी के पूर्णतया लोचदार भाग को जो LP है तरलता जाल कहते हैं क्योंकि वक्र का अंतिम भाग उस r_0 ब्याज दर पर क्षैतिज अक्ष के समान्तान्तर हो जाता है जो आधार अक्ष के समान है क्योंकि ब्याज की दर न्यूनतम है जिस पर व्यक्ति को निवेश करने की अपेक्षा अपने पास नकदी में धारण पसन्द करेगा जहां X अक्ष पर मुद्रा की मांग एवं Y अक्ष पर ब्याज की दर को दर्शाता है।

(22)

अनधिमान वक्र / तटस्थता वक्र
(Indifference curve)

दो या दो से अधिक वस्तुओं के ऐसे संयोगो या युग्मो को प्रदर्शित करने वाला वक्र जिससे उपभोक्ता को समान संतुष्टि प्राप्त हो अनधिमान वक्र या तटस्थता कहलाता हैं। जैसे- यदि x तथा y दो वस्तुऐं हो और यदि हम दोनो वस्तुओं के अनेक ऐसे युग्म प्राप्त करे जैसे 1x तथा 15y, 2x तथा 10y 3x तथा 7y आदि जिनसे उपभोक्ता को एक ही संतुष्टि प्राप्त हो, तथा यदि हम इन युग्मो को ग्राफ पर अंकित करें तो हमें दोनो वस्तुओं की विभिन्न मात्राओं को प्रदर्शित करने वाले अनेक ऐसे बिन्दु प्राप्त होगे जो समान संतुष्टि प्रदर्शित करेगे। और इन समान संतुष्टि देने वाले विभिन्न विभिन्न बिन्दुओं को मिलाने से जो वक्र प्राप्त होगा उसे ही तटस्थता या अनधिमान वक्र कहते हैं।

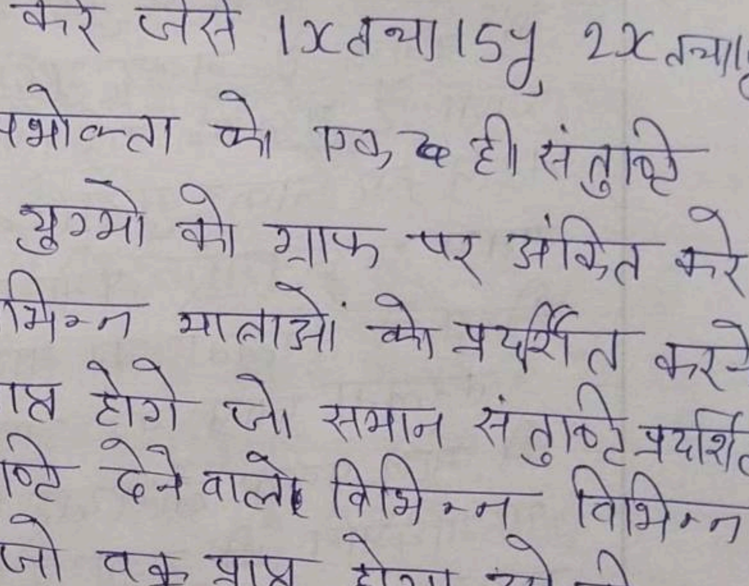

विशेषता –

* अनधिमान वक्र कुटाल ऋणात्मक होता हैं। अर्थात बाए से दाये नीचे प्रवाह की ओर गिरता हुआ
* दो अनधिमान वक्र एक दूसरे को काट नहीं सकते हैं।
* अनधिमान वक्र मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर (convex) होते हैं।
* निम्नतर अनाधिमान वक्र उच्चतर अनाधिमान वक्र अधिक संतुष्टि प्रदर्शित करता हैं।
* अनधिमान वक्र x एवं y अक्ष को स्पर्श नहीं कर सकता हैं।

सीमिता का लगान (Scarcity Rent) या दुर्लभता का लगान

प्रो० रिकार्डो के अनुसार "लगान भूमि की उपज का वह भाग है जो मौलिक तथा अविनाशी शक्तियों के उपयोग के लिए भूस्वामी को दिया जाता है।" रिकार्डो के अनुसार लगान दो प्रकार के होते हैं-

1 - सीमितता का लगान (Scarcity Rent
2 भेदात्मक लगान (Differential Rent)

यदि सम्पूर्ण भूमि एक समान उर्वरकता की हैं तब भूमि की सीमित अर्थात कमी जिस लगान को उत्पन्न करती हैं, उसे सीमितता का लगान कहते हैं। सीमितता का लगान स्पष्ट करने के लिए प्रतिष्ठित अर्थशास्त्री रिकार्डो भूमि के सभी उपलब्ध भूखण्डो की उर्वरकता में समानता की मान्यता लेकर चलते हैं भूमि का प्रयोग केवल अनाज उगाने में ही किया जाता हैं दूसरे शब्दो में भूमि का कोई अन्य वैकल्पिक प्रयोग सम्भव नही हैं जब तक भूमि की अतिरिक्त इकाइयां उपलब्ध हैं तब तक अनाज की कीमत और लागत के बराबर होगी तथा कोई अतिरेक उत्पन्न नहीं होगा जैसे-जैसे जनसंख्या में वृद्धि होगी अनाज की मांग में वृद्धि होगी और अतिरिक्त भूखण्ड पर खेती आरम्भ होती हैं अतिरिक्त भूखण्डों के प्रयोग से अनाज की पूर्ति को बढ़ी हुई मांग के साथ समायोजित किया जा सकता हैं। यदि भूखण्डो का पूर्ण उपयोग करने के बाद भी जनसंख्या में वृद्धि होती हैं तब अतिरिक्त मांग को अनाज की पूर्ति को बढ़ाकर पूरा नहीं किया जा सकता हैं क्योंकि सम्पूर्ण भूमि ~~पहले से ही~~ का प्रयोग पहले ही हो चुका हैं ऐसी दशा में भूमि की सीमितता अनाज की कीमत बढ़ायेगी। इसी को सीमितता का लगान कहते हैं।

भेदात्मक लगान (Differential Rent)

जब भूमि की उर्वरकता और स्थिति के आधार पर भूखण्डो में भेद किया जा सकता हैं तब अधिक उर्वरकता वाली भूमियें पर जो लगान उत्पन्न होता हैं उसे भेदात्मक लगान कहते हैं। भेदात्मक लगान के लिए रिकार्डो ने इस पूर्वमान्यता को लेकर चलते हैं कि एक द्वीप में अनेक ऐसे भूखण्ड हैं जिनकी उर्वरकता, गुण, स्थिति आदि में एक समानता न होकर भिन्नता होती है, उन भू-खण्डो को उर्वरकता, गुण, तथा स्थिति के आधार पर विभिन्न श्रेणी वाले भूखण्डों के रूप में परिभाषित किया जाता है। रिकार्डो ने एक ऐसे द्वीप या टापू की कल्पना की जो बिल्कुल नया हैं, जिसमे चार श्रेणियों की भूमि उपलब्ध हैं तथा जिनकी उर्वरकता शक्ति में भिन्नता हैं। मानव जब सर्वप्रथम रहना शुरू करेगा तो जो सबसे अधिक उर्वरकता की भूमि है, उस पर खेती करेगा उसे सर्वोत्तम श्रेणी की भूमि कहते हैं। जहां श्रम एवं पूंजी की एक निश्चित मात्रा में अधिकतम उत्पादन किया जा सकता हैं। इस प्रकार से उर्वरकता के आधार पर भू-खण्डो को सर्वोत्तम श्रेणी से लेकर निम्नतम श्रेणी तक विभाजन किया जाता हैं। रिकार्डो ने निम्नतम उर्वरकता श्रेणी वाली भूमि को सीमान्त भूमि कहा हैं निम्नतम श्रेणी से श्रेष्ठ भूमि को अधि सीमान्त भूमि कहा हैं। सीमान्त भूमि पर कोई अतिरेक प्राप्त नहीं होता हैं, क्योंकि इस भूमि पर प्राप्त आगम तथा खेती की लागत के बराबर होता है, अधिसीमान्त भूमि सीमान्त भूमि से अतिरेक उत्पन्न करती हैं। क्योंकि यहां प्राप्त आगम व खेती करने की लागत से अधिक होती हैं।

भेदात्मक लगान = अधिसीमान्त भूमि – सीमान्त भूमि

उपभोक्ता का संतुलन
Consumers Equilibrium

एक उपभोक्ता उस समय संतुलन की स्थिति में होता हैं जब वह अपनी रुचियों एवं दो वस्तुओं की कीमतों के निश्चित रहने पर अपनी आय को दो वस्तुओं को क्रय करने में इस ढंग से खर्च करता हैं कि उसे अधिकतम संतुष्टि प्राप्त हो सके। एक उपभोक्ता अपनी आय से अधिकतम संतुष्टि कैसे प्राप्त कर सकता हैं अर्थात वह संतुलन की स्थिति में कैसे आता हैं इसे ज्ञात करने के लिए दो उपकरण हैं तटस्थता मानचित्र एवं कीमत रेखा।

संतुलन की शर्ते –

* संतुलन की दशा में उपभोक्ता का तटस्थता वक्र कीमत रेखा को स्पर्श करें।
* संतुलन बिन्दु पर सन्तुष्टि अधिकतम तब होगी जब x की Y के लिए सीमान्त प्रतिस्थापन दर x वस्तु की कीमत और Y वस्तु की कीमत के बराबर हो जाय।

$$MRS_{xy} = \frac{P_x}{P_y}$$

* तटस्थता वक्र मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर होना चाहिए / अर्थात संतुलन बिन्दु पर सीमान्त प्रतिस्थापन दर घटती हुई होनी चाहिए

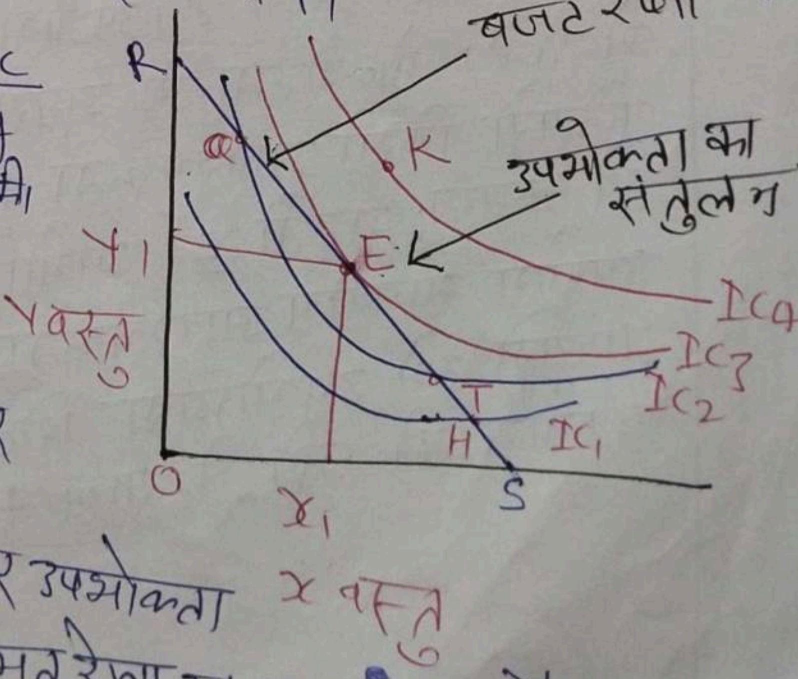

प्रदर्शित चित्र में बिन्दु E पर उपभोक्ता संतुलन में हैं / जहां RS कीमत रेखा या बजट रेखा है

उपभोक्ता का संतुलन
Consumers ~~Eq~~ Equilibrium

एक उपभोक्ता उस समय संतुलन की स्थिति में होता हैं जब वह अपनी रुचियों एवं दो वस्तुओं की कीमतों के निश्चित रहने पर अपनी आय को दो वस्तुओं के क्रय करने में इस ढंग से खर्च करता हैं कि उसे अधिकतम संतुष्टि प्राप्त हो सके। एक उपभोक्ता अपनी आय से अधिकतम संतुष्टि कैसे प्राप्त कर सकता हैं अर्थात वह संतुलन की स्थिति में कैसे आता हैं इसे ज्ञात करने के लिए दो उपकरण हैं तटस्थता मानचित्र एवं कीमत रेखा।

संतुलन की शर्तें —

* संतुलन की दशा में उपभोक्ता का तटस्थता वक्र कीमत रेखा को स्पष्ट करें।
* संतुलन बिन्दु पर सन्तुष्टि अधिकतम तब होगी जब x की y के लिए सीमान्त प्रतिस्थापन दर x वस्तु की कीमत और y वस्तु की कीमत के बराबर हो जाय।

$$MRS_{xy} = \frac{P_x}{P_y}$$

* तटस्थता वक्र मूल बिन्दु की ओर उन्नतोदर होना चाहिए / अर्थात संतुलन बिन्दु पर सीमान्त प्रतिस्थापन दर घटती हुई होनी चाहिए

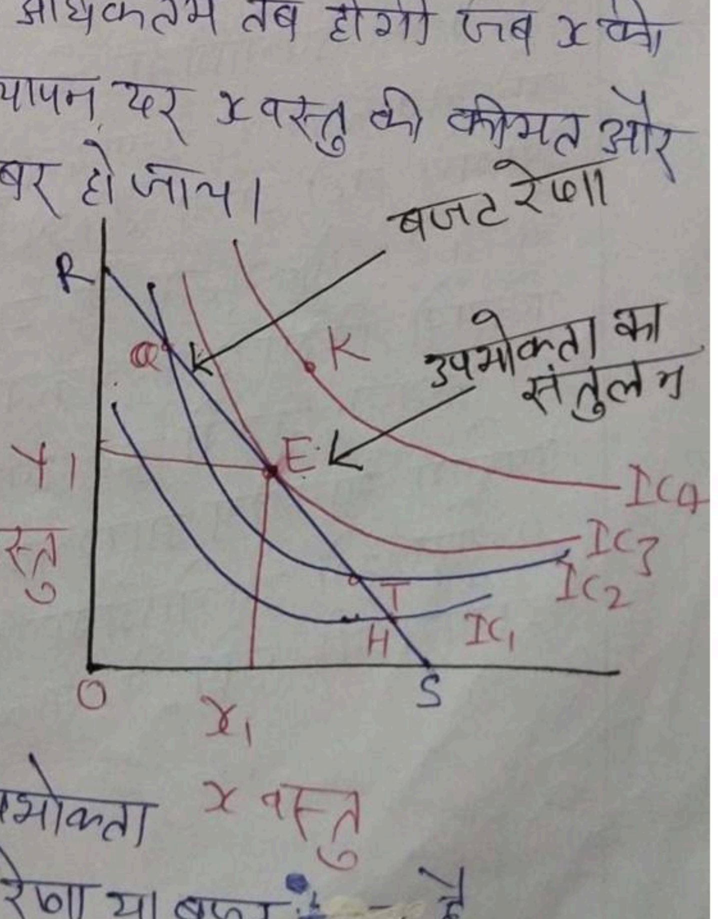

प्रदर्शित चित्र में बिन्दु E पर उपभोक्ता संतुलन में हैं / जहां RS कीमत रेखा या बजट रेखा है

(26)

उपभोग (Consumption)

मानवीय आवश्यकताओं की प्रत्यक्ष संतुष्टि में किसी वस्तु या सेवा के प्रत्यक्ष एवं अंतिम उपभोग द्वारा उसकी उपयोगिता का कम अथवा समाप्त ~~होना~~ या नष्ट होना उपभोग कहलाता है। उपभोग आर्थिक क्रियाओं का आदि और अंत है। वस्तुओं के उपभोग की इच्छा से प्रेरित होकर ही मनुष्य प्रयत्न करता है और इन प्रयत्नो से जिस कार्य की उत्पत्ति होती है उसकी क्रियाओं को मनुष्य अपनी आवश्यकताओं पर खर्च कर देता है इस प्रकार

आवश्यकता → ~~प्रत्य~~ प्रयत्न → उत्पादन → उपभोग → आवश्यकता

आदि का अनवरत प्रवाह चलता है। उपभोग हमारी प्रगति एवं समृद्धि का सूचक है। उपभोग ही किसी अर्थव्यवस्था में आय एवं रोजगार का स्तर निर्धारण करता है। उत्पादन, विनिमय एवं वितरण की क्रियाओं का स्वरूप व मात्रा उपभोग पर ही निर्भर करती है। कुछ अर्थशास्त्रीयों के अनुसार "उपभोग वस्तु की उपयोगिता को नष्ट करना है। प्रो० मार्शल ने उपभोग को नकारात्मक उत्पादन कहा है पर इसमें उपयोग का स्पष्ट स्वरूप सामने नहीं आता है। उपभोग की सबसे उत्तम परिभाषा प्रो० मेहता ने दी है। प्रो० मेहता के अनुसार "उपभोग उस क्रिया को कहते हैं जिससे किसी आवश्यकता की संतुष्टि के रूप में प्रत्येक इकाई से क्रमशः घटती हुई उपयोगिता प्राप्त होती है।" स्पष्ट है कि उपभोग मानवीय आवश्यकता को पूरा करने की वह क्रिया है जिससे हमें उपयोगिता मिलती है पर यह उपयोगिता उपभोग की वृद्धि के साथ-साथ क्रमशः घटती जाती है।

गणना वाचक उपयोगिता or
उपयोगिता का संख्यावाचक दृष्टिकोण (Cardinal Approach

उपयोगिता एक मनोवैज्ञानिक तथ्य हैं, जो व्यक्तिगत होती है, तथा जो समय, स्थान तथा व्यक्ति के साथ बदलती रहती हैं। किसी वस्तु से जो उपयोगिता हम प्राप्त करते हैं वह केवल वस्तु से ही सम्बंधित नहीं हैं, बल्कि हमारी आवश्यकता की तीव्रता से भी सम्बद्ध हैं, यदि भूख बहुत तेज लगी हैं, तो रोटी की उपयोगिता अधिक होगी जबकि भूख कम लगी रहने पर उपयोगिता कम होगी। उपयोगिता मापने में अर्थशास्त्रीयों का मतभेद हैं, प्रो० मार्शल ने बताया कि उपयोगिता को मापा जा सकता हैं जिसे संख्यावाचक दृष्टि (Cardinal) कहा जाता हैं, दूसरी ओर हिक्स, ऐलेन, सेम्युलसन आदि ने कहा कि उपयोगिता मापी नहीं जा सकती बल्कि क्रमवाचक होती हैं।

प्रो० मार्शल ने बताया कि उपयोगिता एक मनोवैज्ञानिक तथ्य होने के बावजूद भी मुद्रा के द्वारा मापा जा सकती हैं: हम किसी वस्तु के द्रव्य के रूप में मूल्य क्यों देते हैं, क्योंकि उसमें उपयोगिता हैं, किसी वस्तु की उपयोगिता उस वस्तु के बदले दिये जाने वाले रुपये के बराबर हुई। उदाहरण - यदि हम एक ग्लास दूध के लिए 1 रुपया देने के लिए तैयार हो तो 1 गिलास दूध की उपयोगिता 1 रुपया के बराबर हुई। प्रो० मार्शल ने बताया कि उपयोगिता की माप विधि को संख्यात्मक (Cardinal) विधि कहते हैं इस विधि के अनुसार उपयोगिता को 1, 2, 3, 4 - . . . - आदि गणना या संख्याओं के रूप में व्यक्त किया जा सकता हैं। इसे प्रो० मार्शल का गणनावाचक उपयोगिता कहा जाता हैं।

(28) (29)

उपयोगिता का क्रमवाचक दृष्टिकोण
Ordinal Approach of Utility

आधुनिक अर्थशास्त्री मार्शल के गणनावाचक उपयोगिता से सहमत नहीं हैं; इनमें हिक्स, एलेन, पैरोटो, सेम्युलसन आदि अर्थशास्त्रीयों का कहना हैं, कि उपयोगिता एक मनोवैज्ञानिक तथा व्यक्तिनिष्ठ (Subjective) विचार हैं, इसकी माप किसी वस्तुनिष्ठ (objective) आधार पर नहीं की जा सकती हैं; किसी वस्तु की उपयोगिता भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के लिए भिन्न भिन्न तो होगी ही साथ ही एक ही व्यक्ति के लिए विभिन्न समय पर अलग-अलग होगी उपयोगिता बदलती रहती हैं। अतः उसकी माप सम्भव नहीं हैं। गणनावाचक विधि के दोषों को दूर करने के लिए इन अर्थशास्त्रीयों ने क्रमवाचक विधि प्रस्तुत की। इसके अनुसार यह नहीं कहा जा सकता हैं कि रोटी की पहली इकाई से 25 तथा दूसरी से 15 उपयोगिता मिली। इस विधि के अनुसार केवल संतुष्टि या उपयोगिता का स्तर ज्ञात किया जा सकता हैं इसका आशय यह है कि इस विधि के द्वारा यह तो कहा जा सकता हैं कि पहली रोटी से मिलने वाली संतुष्टि का स्तर दूसरी से अधिक रहा, पर यह नहीं कहा जा सकता कि कितनी संतुष्टि मिली अथवा पहली से दूसरी की अपेक्षा कितनी अधिक संतुष्टि मिली। इस प्रकार उपयोगिता का क्रमवाचक दृष्टिकोण में उपयोगिता को 1, 2, 3, 4, -- आदि में न मापकर बल्कि पहला, दूसरा, तीसरा आदि के रूप में मापा जा सकता हैं यह एक सापेक्ष विधि हैं इसमें उपयोगिता को वरीयता क्रम निर्धारित करके बताया जा सकता हैं।

(29) सीमान्त उपयोगिता, औसत उपयोगिता एवं कुल उपयोगिता
Marginal Utility, Average Utility and Total Utility

सीमान्त शब्द का अर्थ एक अतिरिक्त से है। किसी वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई के उपभोग से संतुष्टि के कुल स्तर में जो वृद्धि होती है वह उस अतिरिक्त इकाई की सीमान्त उपयोगिता कहलाती है। सीमान्त उपयोगिता कुल उपयोगिता की परिवर्तन दर को बताती है। यदि कुल उपयोगिता में से (n-1) इकाइयों की कुल उपयोगिता घटा देने पर nवीं इकाई की सीमान्त उपयोगिता प्राप्त हो जाती है

$MU_n = TU_n - TU_{n-1}$

MU_n → nवीं इकाई की सीमान्त उपयोगिता

TU_n → nवीं इकाई से प्राप्त कुल उपयोगिता

TU_{n-1} (n-1) इकाइयों से प्राप्त कुल उपयोगिता

औसत उपयोगिता वह उपयोगिता होती है जो कुल उपयोगिता में से उत्पादन की मात्रा से भाग देने पर औसत उपयोगिता प्राप्त होती है।

$AU = \frac{TU}{Q}$

कुल उपयोगिता का अर्थ किसी विशेष समय पर वस्तु की समस्त इकाइयाँ उपभोक्ता को कुल कितनी संतुष्टि दे रही हैं। सामान्य परिस्थितियों में उपयोग की मात्रा की प्रत्येक वृद्धि कुल उपयोगिता को बढ़ाती है इसके बाद घटती दर से बढ़ती अंत ऋणात्मक दर से गिरती जाती है।

TU कुल उपयोगिता है जहां OF बढ़ती है FE घटती दर से बढ़ती है इसके बाद E के बाद गिरती है जहां TU अधिकतम होगा वहीं पर MU न्यूनतम होगा।

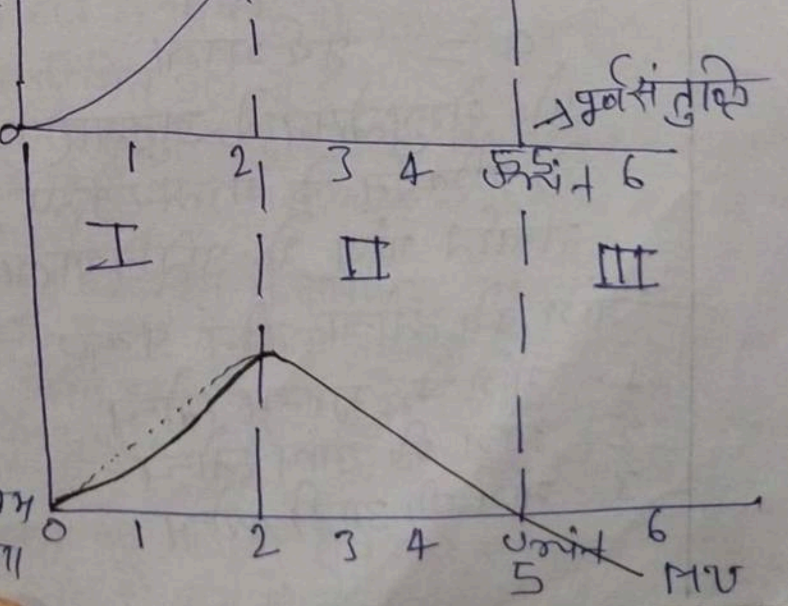

(29) सीमान्त उपयोगिता, औसत उपयोगिता एवं कुल उपयोगिता
Marginal Utility, Average Utility and Total Utility

सीमान्त शब्द का अर्थ एक अतिरिक्त से है। किसी वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई के उपभोग से संतुष्टि के कुल स्तर में जो वृद्धि होती है वह उस अतिरिक्त इकाई की सीमान्त उपयोगिता कहलाती है। सीमान्त उपयोगिता कुल उपयोगिता की परिवर्तन दर को बताती है। यदि कुल उपयोगिता में से (n-1) इकाइयों की कुल उपयोगिता घटा देने पर nवीं इकाई की सीमान्त उपयोगिता प्राप्त हो जाती है

$MU_n = TU_n - TU_{n-1}$

$MU_n \rightarrow$ nवीं इकाई की सीमान्त उपयोगिता

$TU_n \rightarrow$ nवीं इकाई से प्राप्त कुल उपयोगिता

TU_{n-1} (n-1) इकाइयों से प्राप्त कुल उपयोगिता

औसत उपयोगिता वह उपयोगिता होती है जो कुल उपयोगिता में से उपभोग की मात्रा से भाग देने पर औसत उपयोगिता प्राप्त होती है।

$AU = \frac{TU}{n}$

कुल उपयोगिता का अर्थ

किसी विशेष समय पर वस्तु की समस्त इकाइयां उपभोक्ता को कुल कितनी संतुष्टि दे रही हैं।

सामान्य परिस्थितियों में उपभोग की मात्रा की प्रत्येक वृद्धि कुल उपयोगिता को बढ़ाती है इसके बाद घटती दर से बढ़ती अंत ऋणात्मक दर से गिरती जाती है।

TU कुल उपयोगिता है जहां OF बढ़ती है FE घटती दर से बढ़ती है इसके बाद E के बाद गिरती है जहां TU अधिकतम होगा वहीं पर MU न्यूनतम होगा

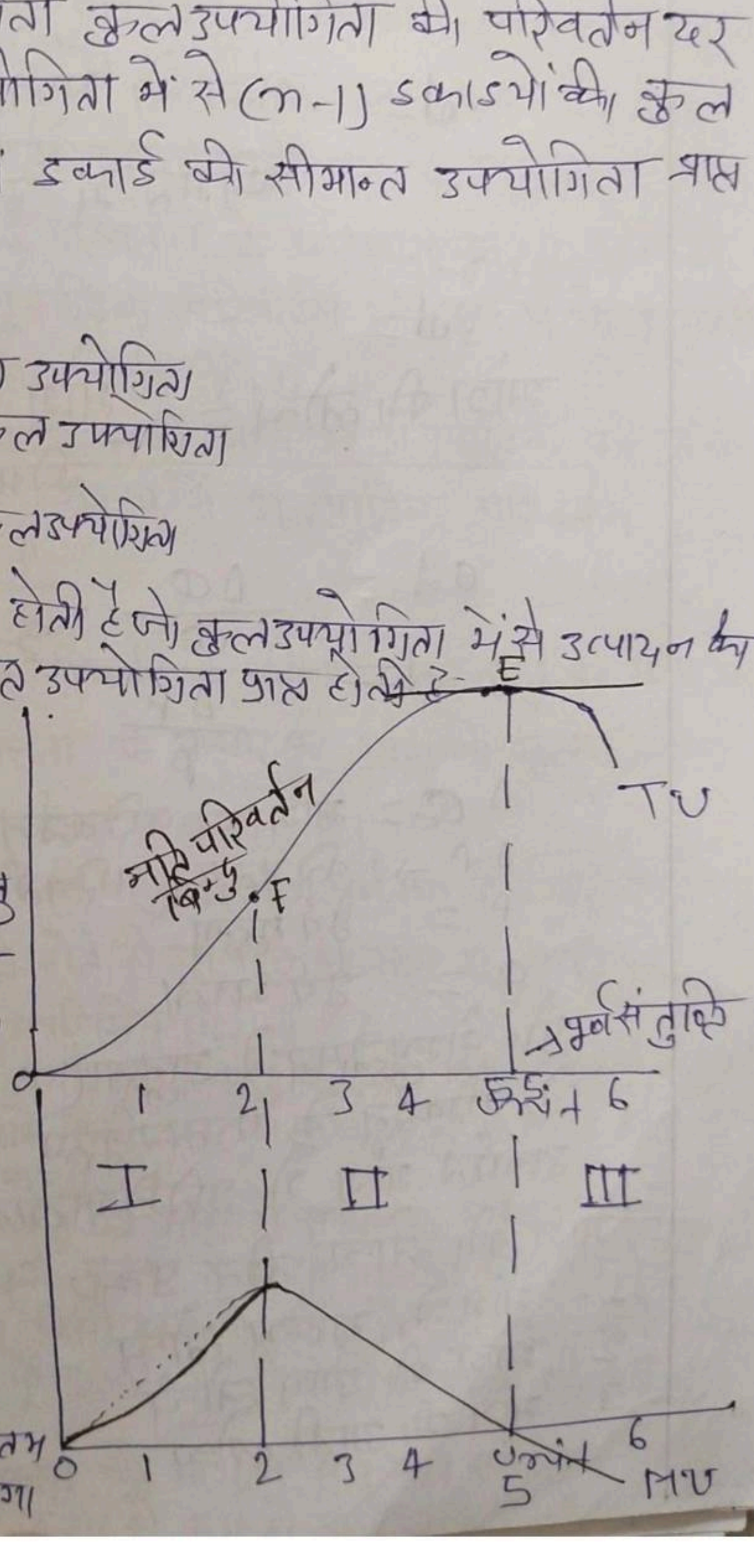

(30)

मांग की लोच
Elasticity of Demand

कीमत में थोड़े से परिवर्तन के कारण मांग की मात्रा में होने वाले परिवर्तन को मांग की लोच कहते हैं। इसका पूरा नाम इसलिए मांग की कीमत लोच है क्योंकि मांग में परिवर्तन कीमत में परिवर्तन के उत्तर में होता है

$$e_d = \frac{\text{मांग की मात्रा में अनुपातिक परिवर्तन}}{\text{कीमत में अनुपातिक परिवर्तन}}$$

या

$e_d =$

$$\text{मांग की लोच} = \frac{\text{मांग का अनुपातिक परिवर्तन}}{\text{कीमत का अनुपातिक परिवर्तन}}$$

$$e_d = \frac{\frac{\Delta Q}{Q}}{\frac{\Delta P}{P}} \text{ या } \frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q}$$

ΔQ = मांग का परिवर्तन
$\Delta P \rightarrow$ कीमत का परिवर्तन
P = पूर्व मूल्य
Q = पूर्व मात्रा

प्रो० सेम्युलसन के अनुसार "मांग की लोच का विचार कीमत के परिवर्तन के फलस्वरूप मांग की मात्रा में परिवर्तन के अंश अर्थात मांग में प्रतिक्रियात्मकता के अंश को बताता है।"

मांग की लोच तीन प्रकार के होते हैं -
1- मांग के मूल्य लोच
2 मांग की आय लोच
3 मांग की आड़ी लोच

मांग की मूल्य लोच
Price Elasticity of Demand

माँग की कीमत लोच एक प्रकार का विशिष्ट सम्बन्ध है जो वस्तु की मांग तथा वस्तु के मूल्य के बीच परिवर्तन का अनुपात या दर प्रदर्शित करता है। इस प्रकार किसी वस्तु के मूल्य में होने वाले सापेक्षिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप वस्तु की मांगी गयी मात्रा में होने वाली सापेक्षिक अनुक्रिया की माप ही मांग की लोच है। श्रीमती जोन राबिन्सन के अनुसार "मांग की लोच अथवा मूल्य में थोड़े परिवर्तन के परिणाम स्वरूप खरीदी गयी वस्तु की मात्रा के अनुपातिक परिवर्तन को मूल्य के अनुपातिक परिवर्तन से भाग देने पर प्राप्त होती है।"

$$\text{मांग की लोच}(e_P) = -\frac{\text{मांगी गयी मात्रा में अनुपातिक परिवर्तन}}{\text{मूल्य में अनुपातिक परिवर्तन}}$$

$$e_P = -\frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q}$$

वस्तु के मूल्य में होने वाले परिवर्तन के परिणामस्वरूप वस्तु की मांग में होने वाले परिवर्तन की सापेक्षता के आधार पर मांग की मूल्य लोच को पांच भागोमें बांटा जा सकता है।

1. पूर्णतया लोचदार मांग ($e_P = \infty$) :- किसी वस्तु की मांग पूर्णतया लोचदार तब होगी जब उसके मूल्य में अल्प वृद्धि होते ही उस वस्तु की मांग शून्य हो जाय। और अल्पकमी उसकी मांग में अपरिमित वृद्धि ला दे।
2. पूर्णतया बेलोचदार मांग - यदि किसी वस्तु के मूल्य में परिवर्तन के बादभी उसकी मांग ज्यों की त्यों रहे उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन न हो उसकी मांग को पूर्णतया बेलोचदार मांग कहते हैं।
3. समलोच मांग :- जब किसी वस्तु की मांग में सापेक्षिक परिवर्तन उसके मूल्य के सापेक्षिक परिवर्तन के बराबर हो तो उसे समलोच मांग कहते हैं।
4. अधिक लोचदार मांग :- जब किसी वस्तु के मांग में होने वाला सापेक्षिक परिवर्तन उसके मूल्य के सापेक्षिक परिवर्तन से अधिक हो तो उसे अधिक लोचदार मांग कहते हैं।
5. बेलोच मांग :- जब किसी वस्तु की मांग में होने वाले सापेक्षिक परिवर्तन उसके मूल्य के सापेक्षिक परिवर्तन से कम हो तो वस्तु की मांग बेलोच कहलाती है।

मांग की मूल्य लोच के प्रकार
Types of Elasticity of Demand

मांग की मूल्य लोच मुख्यत: पांच प्रकार के होते हैं -

1 - पूर्णतया लोचदार मांग (Perfectly Elastic Demand) $e_p = \infty$
किसी वस्तु की मांग पूर्णतया लोचदार तब होगी जब उसके मूल्य में अल्पवृद्धि होते ही उस वस्तु की मांग शून्य हो जाय और अल्प कमी उसकी मांग में अपरिमित वृद्धि ला दे तो उसे पूर्णतया लोचदार मांग कहते हैं

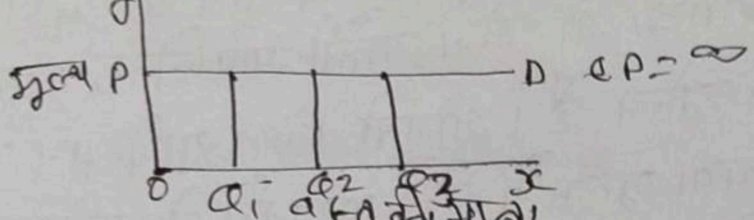

2 - पूर्णतया बेलोचदार मांग (Perfectly Inelastic Demand) $e_p = 0$
यदि किसी वस्तु के मूल्य में परिवर्तन के बाद भी उसकी मांग ज्यों की त्यों रहे उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन न हो उसकी मांग को पूर्णतया बेलोचदार कहेंगे।

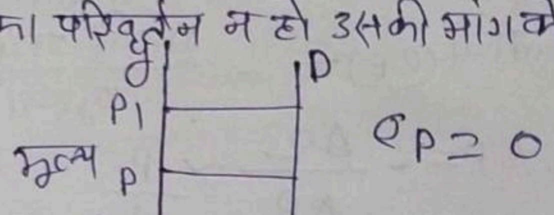

3 - समलोच मांग :- जब किसी वस्तु की मांग में सापेक्षिक परिवर्तन उसके मूल्य के सापेक्षिक परिवर्तन के बराबर हो तो उस वस्तु की मांग को समलोच या इकाई लोच मांग कहते हैं

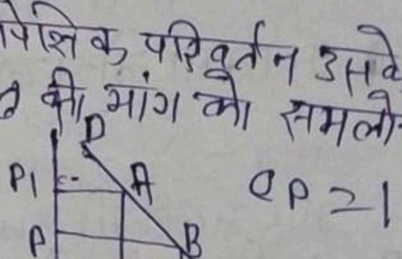

4 अधिक लोचदार मांग (Highly Elastic Demand)
जब किसी वस्तु की मांग में होने वाला सापेक्षिक परिवर्तन उसके मूल्य के सापेक्षिक परिवर्तन से अधिक हो जैसे मूल्य में 10% वृद्धि के कारण मांग में 30% कमी हो जाय तो अधिक लोचदार कहते हैं

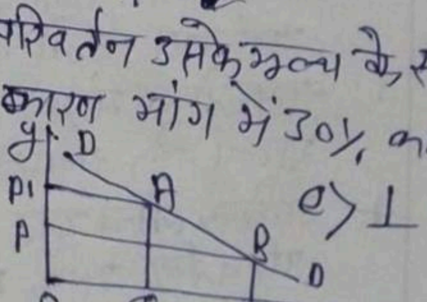

5 बेलोच मांग (Inelastic Demand)
जब किसी वस्तु के मांग में होने वाला सापेक्षिक परिवर्तन उसके मूल्य के सापेक्षिक परिवर्तन से कम हो तो उस वस्तु की मांग बेलोच कही जायेगी।

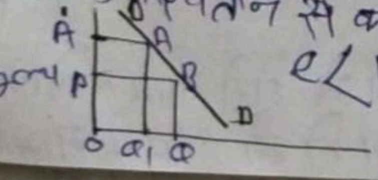

मांग की लोच के प्रकार
Types of Elasticity Demand

मांग की लोच तीन प्रकार के होते हैं।

1 मांग की मूल्य लोच (Price Elasticity of Demand)

जब किसी वस्तु के मूल्य में होने वाले सापेक्षिक परिवर्तन के परिणामस्वरूप वस्तु की मांगी गयी मात्रा में होने वाली सापेक्षिक अनुक्रिया की माप ही मांग की लोच है इसे मांग की मूल्य लोच भी कहते हैं।

$$\text{मांग की लोच} = -\frac{\text{मांगी गई मात्रा में अनुपातिक परिवर्तन}}{\text{मूल्य में अनुपातिक परिवर्तन}}$$

$$e_P = -\frac{\Delta Q}{\Delta P} \times \frac{P}{Q}$$

2 मांग की आय लोच (Income Elasticity of Demand)

किसी उपभोक्ता की आय में परिवर्तन के परिणामस्वरूप वस्तु की मांग में होने वाले सापेक्ष परिवर्तन की माप या क्षमता ही मांग की आय लोच कहलाती है। यदि वस्तु का मूल्य अपरिवर्तित रहे।

$$\text{मांग की आय लोच} (e_y) = \frac{\text{वस्तु के मांग में अनुपातिक परिवर्तन}}{\text{उपभोक्ता की आय में अनुपातिक परिवर्तन}}$$

$$e_y = \frac{\Delta Q}{\Delta y} \times \frac{y}{Q}$$

3 मांग की आड़ी लोच या तिर्यक लोच (Cross Elasticity of Demand)

मांग की आड़ी लोच सम्बंधित वस्तुओं में उत्पन्न होती हैं कुछ वस्तुएं इस प्रकृति की होती हैं कि एक वस्तु का कीमत परिवर्तन दूसरी वस्तु की मांग को भी परिवर्तित कर देती हैं जबकि दूसरी वस्तु की कीमत में कोई परिवर्तन नहीं होता

$$\text{आड़ी मांग की लोच } e_c = \frac{X \text{ वस्तु की मांग में अनुपातिक परिवर्तन}}{Y \text{ वस्तु की कीमत का अनुपातिक परिवर्तन}}$$

34

सीमान्त प्रतिस्थापन दर (MRS)
Marginal Rate of Substitution

उदासीनता वक्र के अन्तर्गत उपभोक्ता विभिन्न संयोगों में एक समान संतुष्टि स्तर बनाये रखने के लिए जब एक की इकाइयों को उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है — तो उसे दूसरी वस्तु की इकाइयों का परित्याग करना पड़ता है। एक वस्तु की एक अतिरिक्त इकाइयां प्राप्त करने के लिए उपभोक्ता दूसरी वस्तु की जितनी इकाइयों को छोड़ता है उसे सीमान्त प्रतिस्थापन दर कहा जाता है।

सीमान्त प्रतिस्थापन दर सारणी

संयोग	वस्तु x	वस्तु Y	X की Y के लिए सीमान्त प्रतिस्थापन दर
A	1	20	—
B	2	15	5 : 1
C	3	11	4 : 1
D	4	8	3 : 1
E	5	6	2 : 1
F	6	5	1 : 1

संतुष्टि के समान स्तर को बनाये रखने के लिए Y की वह मात्रा जो उपभोक्ता वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई प्राप्त करने के लिए त्यागने को तत्पर रहता है X की Y के लिए सीमान्त प्रतिस्थापन दर कहलायेगी। उपरोक्त सारणी में प्रत्येक संयोग उपभोक्ता को समान संतुष्टि प्रदान करता है वस्तु x की प्रति इकाई वृद्धि के लिए उपभोक्ता Y की अपेक्षाकृत कम इकाईयां त्यागने को तैयार है। 6वीं संयोग में यह 1:1 ही रह जाती है। प्रथम से लेकर 6वें तक Y के लिए सीमान्त प्रतिस्थापन दर घट रही है। इसे ह्रासमान सीमान्त प्रतिस्थापन दर कहा जाता है।

$$MRS_{xy} = \frac{AP}{AB}$$

$$MRS_{xy} = \frac{-\Delta Y}{\Delta x}$$

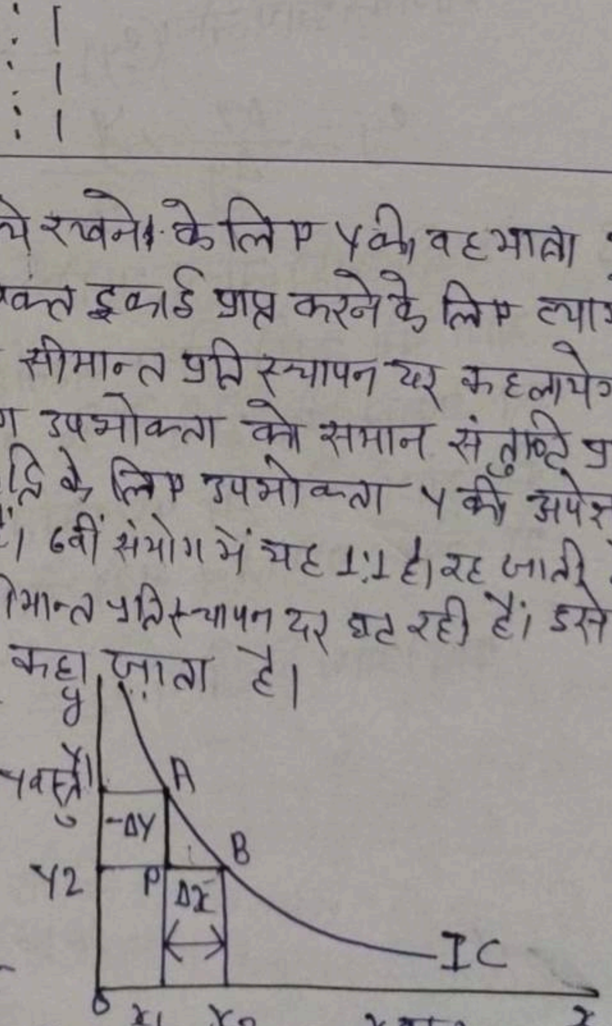

MRS ह्रासमान होती है जो दो कारण है —
1 - प्रत्येक उपयोग के बाद अतिरिक्त इकाई घटता हुआ।
2 वस्तुएं एक दूसरे की अपूर्ण स्थानापन्न होती है।

आय उपभोग वक्र (ICC)

(Income consumption curve)

आय उपभोग वक्र उपभोक्ता की मौद्रिक आय में परिवर्तन के परिणाम स्वरूप किसी वस्तु के उपभोग पर पड़ने वाले प्रभाव का व्याख्या करता है उपभोक्ता की आय में परिवर्तन होने के कारण जबकि दोनो वस्तुओं की कीमते तथा उपभोक्ता की आदत व रुचि स्थिर हैं उसकी मांग में जो परिवर्तन होता है उसे आय प्रभाव कहते हैं।

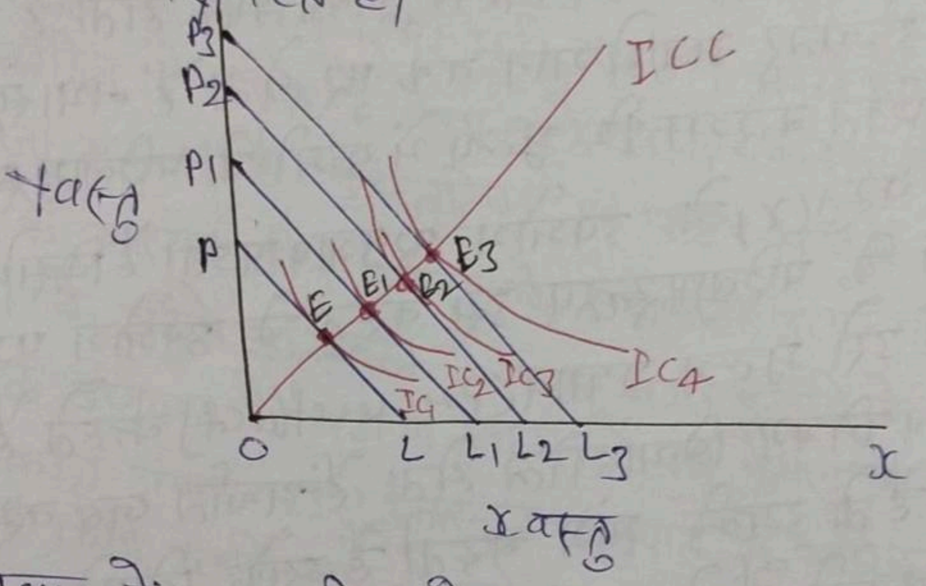

आय प्रभाव में वस्तु की सापेक्षिक कीमतों का अनुपात स्थिर रहता है यही कारण है कि, आय प्रभाव के अन्तर्गत कीमत रेखा अपनी आरम्भिक स्थिति के समान्तर रूप से दायें या बायें खिसकती हैं। प्रदर्शित चित्र में PL, P_1L_1, P_2L_2 एवं P_3L_3 भिन्न भिन्न आय स्तरो पर कीमत रेखाएं हैं, जिनका ढाल आपसमें बराबर है चित्र में E, E_1, E_2 एवं E_3 उपभोक्ता संतुलन बिन्दु हैं, जिनको मिलाती हुई रेखा ICC है, जो आय उपभोग के सम्बन्ध को निर्धारित करती हैं। इस प्रकार आय उपभोग वक्र ऐसे बिन्दुओं का बिन्दुपथ हैं जो वस्तु की कीमतें स्थिर रहने की दशा में भिन्न आय स्तरो पर उपभोक्ता के संतुलन बिन्दु को बताते हैं।

कीमत प्रभाव (Price effect) curve

कीमत उपभोग वक्र (Price consumption curve)

जब किसी वस्तु के मूल्य में कमी आती है तो इसके परिणाम स्वरूप पहली वाली मूल्य रेखा दाहिनी ओर विवर्तित हो जाती है या अपेक्षाकृत कम ढाल की हो जाती है। इस स्थिति में उपभोक्ता अब Y के रूप में व्यक्त अपनी पूर्व आय से ही X की अधिक मात्रा खरीद सकता है इसके परिणाम स्वरूप उपभोक्ता एक नए संस्थिति बिन्दु को प्राप्त होता है जो पहले की अपेक्षा उच्चतर अनाधिमान वक्र पर होता है। नया संस्थिति बिन्दु यह प्रदर्शित करेगा कि मूल्य में कमी के परिणाम स्वरूप उपभोक्ता के उस वस्तु (x) के उपभोग पर प्रभाव पड़ता है किसी वस्तु के मूल्य में कमी के परिणाम स्वरूप उस वस्तु के उपभोग पर जो प्रभाव पड़ता है उसे मूल्य प्रभाव (Price effect) कहते हैं। कीमत प्रभाव में मांग का नियम क्रियाशील होता है अर्थात जब वस्तु की कीमत घटती है तो उसकी मांग बढ़ती है इसके विपरित जब वस्तु की कीमत बढ़ती है तो उसकी मांग घटती है।

प्रदर्शित चित्र में PL1, PL2, PL3 कीमत रेखा है जहां उपभोक्ता का संतुलन E, E1 तथा E2 द्वारा प्रदर्शित है इन बिन्दुओं को मिलाती हुई रेखा खींची जाती है जिसे कीमत उपभोग वक्र PCC कहा जाता है।

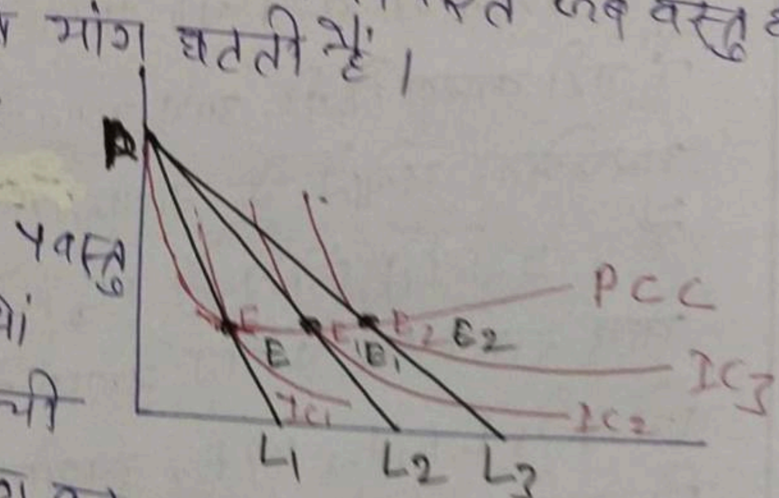

पैमाने के प्रतिफल (Returns to Scale)

पैमाने के प्रतिफल उत्पादन फलन की दीर्घकालीन प्रकृति को बताता है दीर्घकाल में सभी उत्पत्ति के साधन बदले जा सकते हैं। उत्पादन तकनीक में सुधार, श्रम विभाजन एवं विशिष्टीकरण आदि के कारण उत्पादन में आन्तरिक एवं बाहरी बचतें उत्पन्न होती हैं किन्तु यह बचते स्थायी नहीं रह पातीं और बाद में हानियों के रूप में बदलने लगती हैं, दीर्घकाल में कोई उत्पत्ति का साधन स्थिर नहीं रहता। सभी उत्पत्ति के साधन परिवर्तनशील हो जाते हैं तथा इन्हें आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया जा सकता है। आन्तरिक एवं बाह्य बचतों के बदलते स्वरूप के कारण तीन प्रकार के प्रतिफल उत्पन्न होते हैं।

1- पैमाने के बढ़ते प्रतिफल :- जब सभी उत्पत्ति के साधनों को एक निश्चित अनुपात में बढ़ाया जाता है तब पैमाने के बढ़ते प्रतिफल के अन्तर्गत उत्पादन उस निश्चित अनुपात से अधिक अनुपात में बढ़ जाता है। यदि उत्पत्ति साधनों को 10% बढ़ाया जाता है तो उत्पादन में 10% से अधिक की वृद्धि होती है
AB > BC > CD > DE

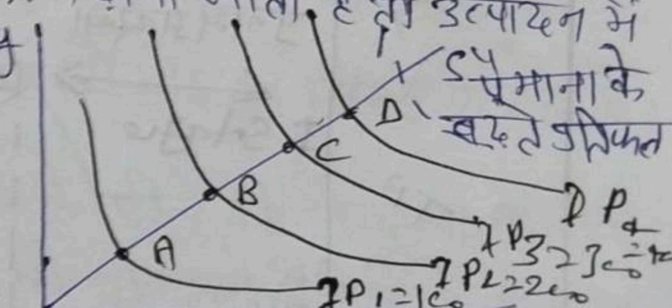

2- पैमाने के स्थिर प्रतिफल :- जब उत्पत्ति के साधनों को एक निश्चित अनुपात में बढ़ाया जाता है तब उत्पादन में भी उसी निश्चित अनुपात में वृद्धि होती है।

3 पैमाने के घटते प्रतिफल :- जब उत्पत्ति के साधनों को एक निश्चित अनुपात में बढ़ाया जाता है तब उत्पत्ति में उस निश्चित अनुपात से कम वृद्धि होती है।

उत्पत्ति ह्रास नियम (Law of Diminishing Returns)

या अल्पकालीन उत्पादन फलन / परिवर्तनशील अनुपात का नियम

अल्पकालीन उत्पादन फलन में स्थिर उत्पत्ति के साधनों के साथ परिवर्तनशील साधनों की मात्राओं के अनुपात को बदल कर उत्पादकता का विश्लेषण किया जाता है।

प्रो० स्टिगलर के शब्दों में "जब कुछ उत्पत्ति साधनों को स्थिर रखकर एक उत्पत्ति साधन की इकाइयों में समान वृद्धि की जाय तब एक निश्चित बिन्दु के बाद उत्पादन की उत्पन्न होने वाली वृद्धियां कम हो जायेगी अर्थात सीमान्त उत्पादन घट जायेगा।

इस प्रकार अन्य साधनों के स्थिर रहते हुए तकनीकी ज्ञान के स्थिर रहते हुए साधनों के संयोग का अनुपात बदलने पर उत्पादन फलनों का स्वरूप भी बदल जाता है और तीन प्रतिफल प्राप्त होते हैं यह तीन प्रकार के प्रतिफलन निम्नवत है-

1. प्रथम अवस्था - बढ़ते प्रतिफल की अवस्था
2. द्वितीय अवस्था - घटते प्रतिफल की अवस्था
3. तृतीय अवस्था → ~~ऋणात्मक~~ प्रतिफल की अवस्था

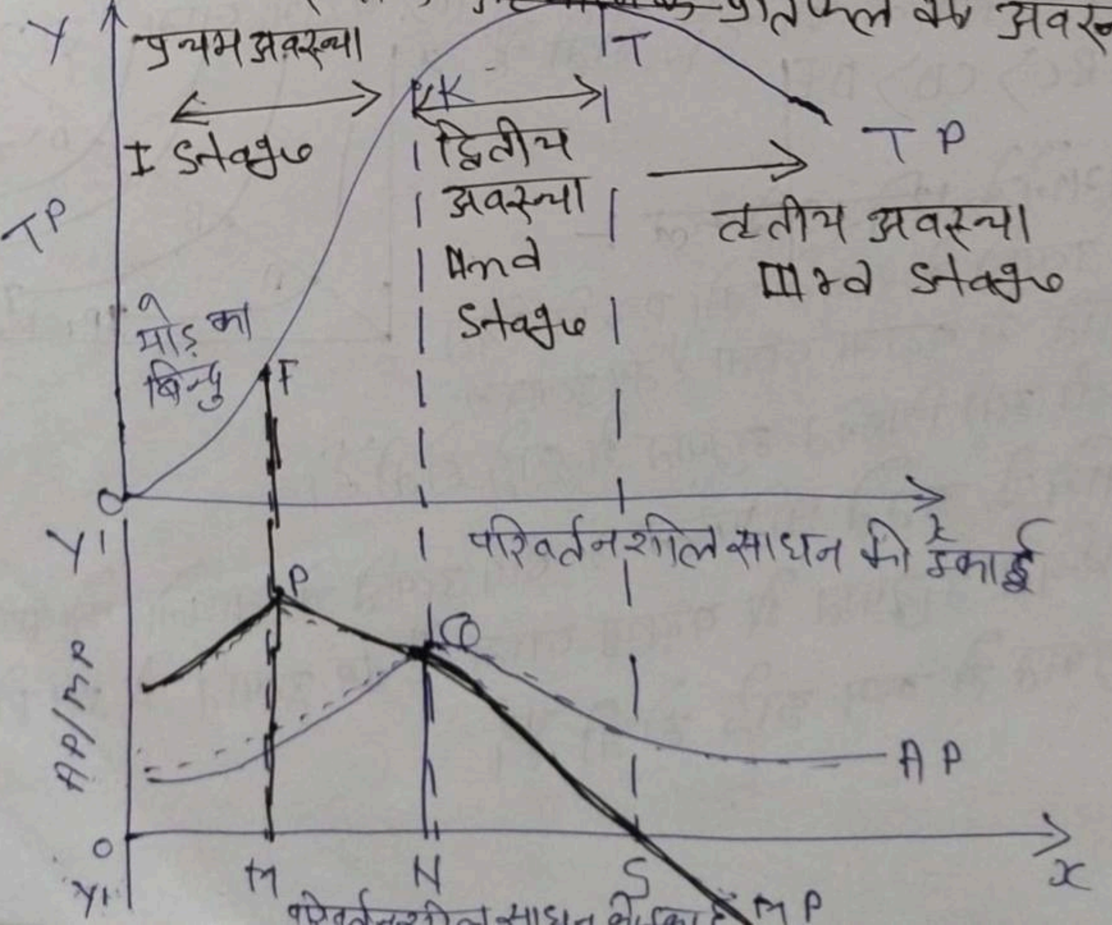

(39) प्रदर्शित चित्र में प्रथम अवस्था को परिवर्तनशील साधन की ON मात्रा तक प्रदर्शित किया गया है दूसरी अवस्था परिवर्तनशील साधन की NS मात्रा के बीच प्रदर्शित की गयी है तथा बिन्दु S के बाद ऋणात्मक प्रतिफल की अवस्था प्रदर्शित की गयी है।

<u>प्रथम अवस्था</u> -

इस अवस्था में औसत उत्पादकता (AP) निरन्तर बढ़ती रहती है और सीमान्त उत्पादकता (MP) धनात्मक एवं औसत उत्पादकता (AP) से अधिक होती है जिसके कारण TP तेजी से बढ़ती है और बढ़ते प्रतिफल प्राप्त होते हैं इस अवस्था में जैसे-जैसे स्थिर साधनों पर परिवर्तनशील साधन की मात्रा बढ़ायी जाती है वैसे-वैसे स्थिर साधन का पूर्ण विदोहन होने के कारण बढ़ते प्रतिफल प्राप्त होते हैं।
प्रदर्शित चित्र में बिन्दु O से F तक गमन कुल उत्पादन में बढ़ती हुई दर से वृद्धि हो रही है लेकिन बिन्दु O से F तक TP वक्र X अक्ष के उन्नतोदर (convex) है बिन्दु F से K तक TP वक्र घटती दर से बढ़ता है क्योंकि इस अवस्था में MP वक्र तो घटती है किन्तु AP वक्र में वृद्धि होती है बिन्दु F से K के बीच TP वक्र X अक्ष के प्रति नतोदर हो जाता है बिन्दु F पर TP वक्र की प्रकृति में परिवर्तन होता है इसलिए इसे मोड़ का बिन्दु कहते हैं।

<u>द्वितीय अवस्था</u> - बिन्दु K एवं T के बीच की अवस्था द्वितीय अवस्था है यह घटते प्रतिफल की अवस्था है क्योंकि MP एवं AP वक्र दोनों घटती हुई होती है लेकिन धनात्मक है, जहां पर MP वक्र AP वक्र के अधिकतम बिन्दु B पर काटती हुई निचे गिरती है वही से दूसरी अवस्था शुरू हो जाती है जबकि जहां TP वक्र अधिकतम होती है वहीं पर MP वक्र अपने शून्य बिन्दु S पर काटती हुई ऋणात्मक हो जाती है जहां पर बिन्दु S पर द्वितीय अवस्था समाप्त हो जाती है

(40) बिन्दु S पर परिवर्तनशील साधन की सीमान्त उत्पादकता (MP) शून्य हो जाती है यह अवस्था इसलिए उत्पन्न होती है क्योंकि जब स्थिर साधनो पर परिवर्तनशील साधन की ON इकाइयों से अधिक इकाइयों का प्रयोग किया जाता है तो अति विदोहन के कारण आन्तरिक हानियां उत्पन्न होती हैं जिसके कारण MP घटकर शून्य तक पहुंच जाती है।

तीसरी अवस्था :- इस अवस्था में बिन्दु T के बाद TP वक्र घटना आरम्भ कर देता हैं क्योंकि इस बिन्दु के बाद MP वक्र ऋणात्मक हो जाती है।

एक विवेकशील उत्पादक सदैव दूसरी अवस्था में उत्पादन कार्य करना पसन्द करता हैं क्योंकि इस अवस्था में भी अविभाज्य स्थिर साधनो का पूर्ण विदोहन करके उत्पादक अधिकतम उत्पादकता प्राप्त करने में सफल होता हैं उत्पादक के लिए लाभदायक यह है कि वह परिवर्तनशील साधनो की इकाइयों को उत्पादन क्षेत्र में तब तक बढ़ाया जाय जब तक बिन्दु S पर उसे ~~कुल~~ अधिकतम कुल उत्पादकता प्राप्त न हो जाय।

उपभोक्ता की बचत / उपभोक्ता अधिशेष (Consumer Surplus)

(41)

उपभोक्ता की बचत की विचारधारा के प्रतिपादक वस्तुतः एक फ्रांसीसी अर्थशास्त्री ड्युपिट थे। उपभोक्ता की बचत को बाद में मार्शल ने उपयोगिता विश्लेषण द्वारा एवं हिक्स ने उदासीनता वक्रों की सहायता से स्पष्ट किया। मार्शल के शब्दों में "किसी वस्तु के प्रयोग से वंचित होने की अपेक्षा उपभोक्ता जो कीमत देने को तत्पर रहता है तथा वास्तव में जो कीमत देता है उसका अतिरेक ही उपभोक्ता की बचत कहा जाता है।"

उपभोक्ता की बचत = भुगतान देने की तत्परता − वास्तविक दिया गया भुगतान

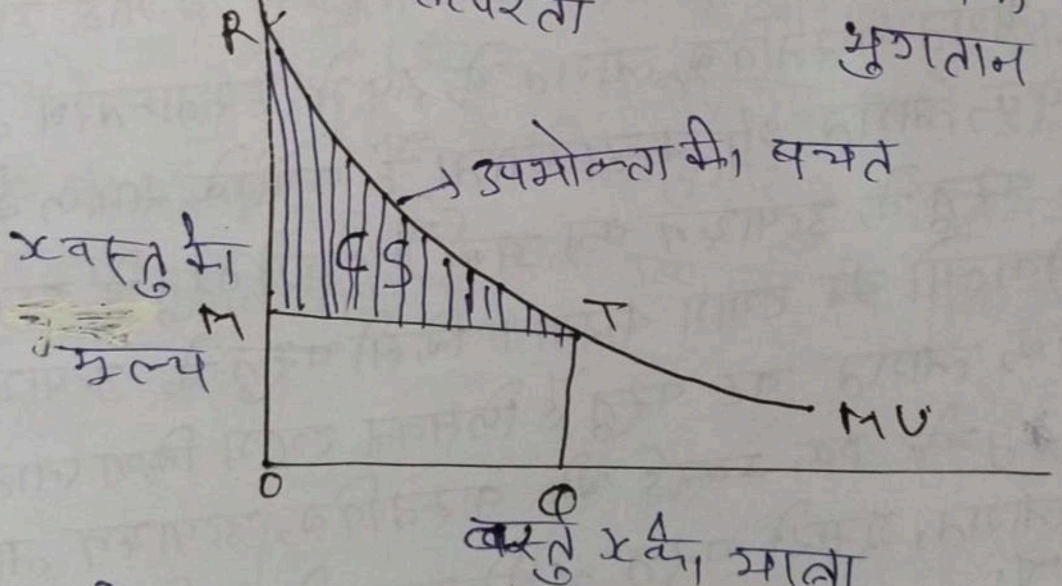

दर्शाया गया चित्र में MU उपभोक्ता का सीमान्त उपयोगिता वक्र है।

उपभोक्ता की बचत = कुल उपयोगिता − कुल कीमत

C.S = RMOQT − MOQT

C.S = RMT

(42)

अवसर लागत (Opportunity cost)

यह लागत की आधुनिक धारणा हैं इसे अंतरण कीमत या विकल्प लागत भी कहते हैं। अवसर लागत पूर्व निश्चित विकल्प की लागत हैं, जब कोई फर्म एक वस्तु के उत्पादन के लिए साधन आगत खरीदता या किराये पर लेता हैं तो उसे इन साधनो को कम से कम इतना देना पड़ता हैं जितना वे सर्वश्रेष्ठ के निकटम उपयोग से कमा सकते हैं यदि फर्म A को किसी मैनेजर को रखना हो और यह मैनेजर दूसरी नौकरी में 3000 रुपये कमा प्रतिमाह कमा सकता है तो फर्म को उसे कम से कम 3000 रुपये अवश्य देने होगे। हो सकता है कि उसकी सेवाएं बनाए रखने के लिए फर्म उसे अधिक सेलरी दे तब यह उसकी अवसर लागत के अलावा अतिरिक्त कमाई होगी।

अवसर लागत वास्तविक लागत के रूप में हस्तान्तरण लागत या वैकाल्पिक लागत भी कहा जाता हैं क्योंकि समाज की दृष्टि से एक वस्तु के उत्पादन का अर्थ हैं दूसरी वस्तु के अवसरो या दूसरे विकल्पों का त्याग करना। किसी वस्तु के उत्पादन की वास्तविक लागत वह वस्तु है जिसका त्याग किया जाता हैं अर्थात y की एक इकाई की वास्तविक उत्पादन लागत या अवसर लागत, दूसरी वस्तु x की त्यागी गई मात्रा के बराबर होती हैं। एक श्रमिक को मेज बनाने में लगाना, या कुर्सी बनाने में लगाना आदि लेकिन एक समय में या तो मेज बनायेगा लेकिन कुर्सी को त्यागेगा। त्यागी गयी कुर्सी की लागत मेज की अवसर लागत होगी। एक समय में किसी उत्पादन के साधन को किसी एक ही प्रयोग में लगाया जा सकता हैं और उसके अन्य प्रयोगो के अवसरो का त्याग करना आवश्यक हो जा जाता हैं। इसी को अवसर लागत कहते है।

कुल परिवर्तनशील लागत (TVC) (Total Variable Costs)

कुछ साधन ऐसे हो सकते हैं जिनमें, उत्पादन के परिवर्तनशील के लिए, तत्काल परिवर्तन लाया जा सकता है। ऐसे आगत हैं जो उत्पादन के स्तर के साथ-साथ परिवर्तित होते रहते हैं जैसे उत्पादन में वृद्धि लाने के लिए कच्चे माल में वृद्धि, श्रमिकों में वृद्धि, ईंधन, बिजली आदि सम्मिलित किये जा सकते हैं। इन आगतों (Input) या साधनों को परिवर्तनीय साधन कहते हैं तथा इन साधनों को भुगतान की जाने वाली राशि को परिवर्तनशील लागत कहते हैं। परिवर्तनशील लागत वह लागत हैं जो उत्पादन के स्तर के साथ-साथ परिवर्तित होती जाती हैं और उत्पादन के साधन के साथ प्रत्यक्ष सम्बंध होता हैं। उत्पादन में वृद्धि या कमी इसमें वृद्धि या कमी लाती हैं। प्रो० बेन के अनुसार "परिवर्तनशील लागत वह लागत हैं जिसकी मात्रा उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन होने पर परिवर्तित होती हैं।"

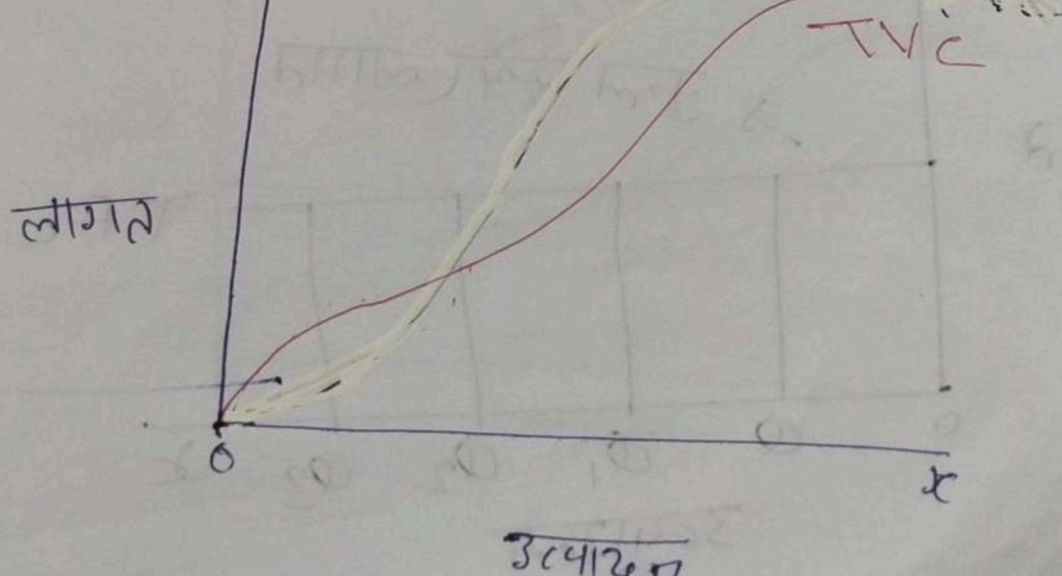

कुल स्थिर लागत (TFC)
Total fixed cost

ऐसे आगत या उत्पादन के साधन होते हैं जिनमे तत्काल परिवर्तन नहीं लाया जा सकता हैं जैसे मशीन, भवन, बिजली का बिल, आदि इन पूंजीगत सम्पत्तियों में वृद्धि कम समयावधि में नहीं लाया जा सकता हैं इनकी वृद्धि में बहुत अधिक समय लगता हैं इन साधनो को अल्पअवधि में स्थिर साधन कहते हैं क्योंकि अल्प अवधि में इसमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं लाया जा सकता हैं इससे सम्बंधित लागत को स्थिर लागत कहते है अर्थात स्थिर लागत वह लागत है जो उत्पादन बंद होने के बाद भी उत्पादक को वहन करना पड़ता है प्रो० बेन्हम के अनुसार "स्थिर लागत वह लागत हैं जिनकी कुल राशि अल्पकाल में उत्पादन की मात्रा में परिवर्तन होने पर भी पूर्णतया अपरिवर्तित रहती हैं।" प्रो० मार्शल ने इसे पूरक लागत कहा हैं। स्थिर लागत में उत्पादन की मात्रा में कोई प्रभाव नहीं पड़ता हैं।

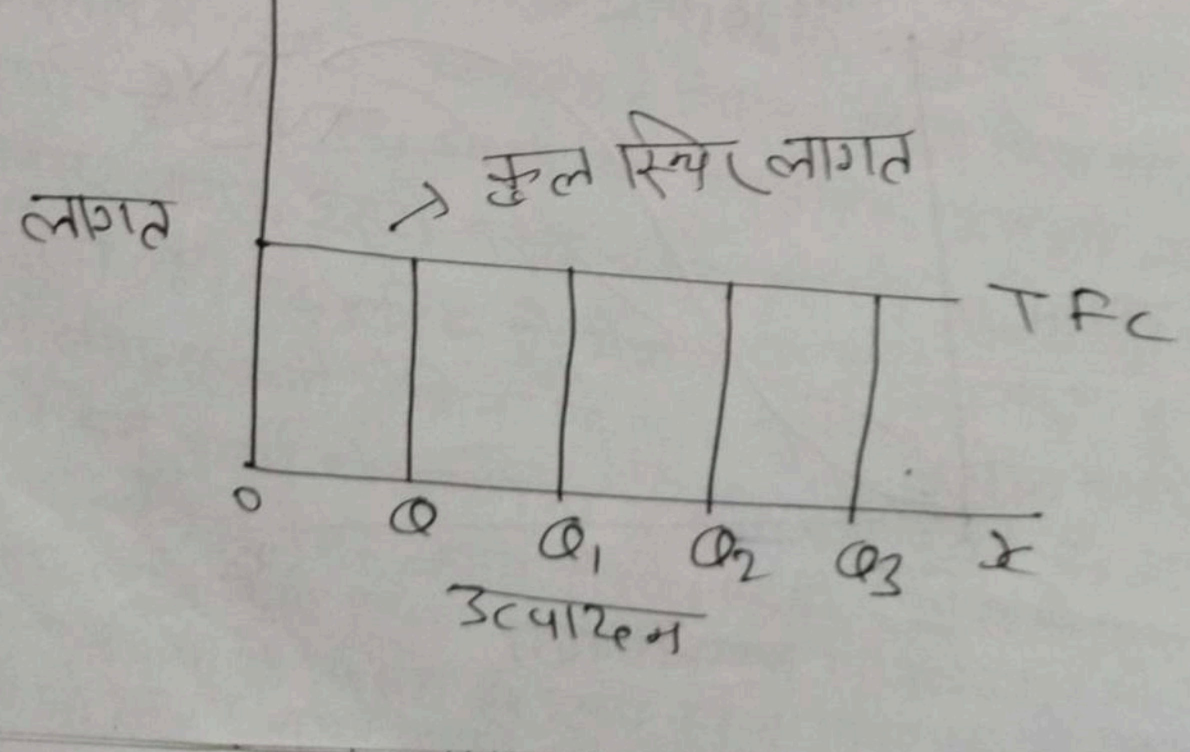

कुल लागत (Total Cost)

किसी उत्पादक या फर्म द्वारा उत्पादन हेतु किए गये कुल मुद्रा व्यय को लागत कहते हैं इसमें श्रम की मजदूरी, वेतन, कच्चे माल की लागत, मशीनों और उपकरणों का खर्च, भवन, पूंजी का ब्याज, ईंधन, यातायात और विज्ञापन तथा बीमा खर्च आदि को सम्मिलित किया जाता है। कुल लागत में स्थिर लागत एवं परिवर्तनशील लागत दोनों सम्मिलित होती हैं। स्थिर लागत को कुल स्थिर लागत (TFC) कहा जाता है। स्थिर लागत वह लागत है जो उत्पादन की मात्रा में वृद्धि के साथ अपरिवर्तित रहती है। जैसे मशीन, भवन, बिजली के बिल, रखरखाव खर्च और जब परिवर्तनशील लागत को कुल परिवर्तनशील लागत कहते हैं या कुल परिवर्तनशील लागत वह लागत है जो उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ परिवर्तित होती रहती है जैसे कच्चा माल, मजदूरी, और $TC = TVC + TFC$

कुल लागत = कुल परिवर्तनशील लागत + कुल स्थिर लागत

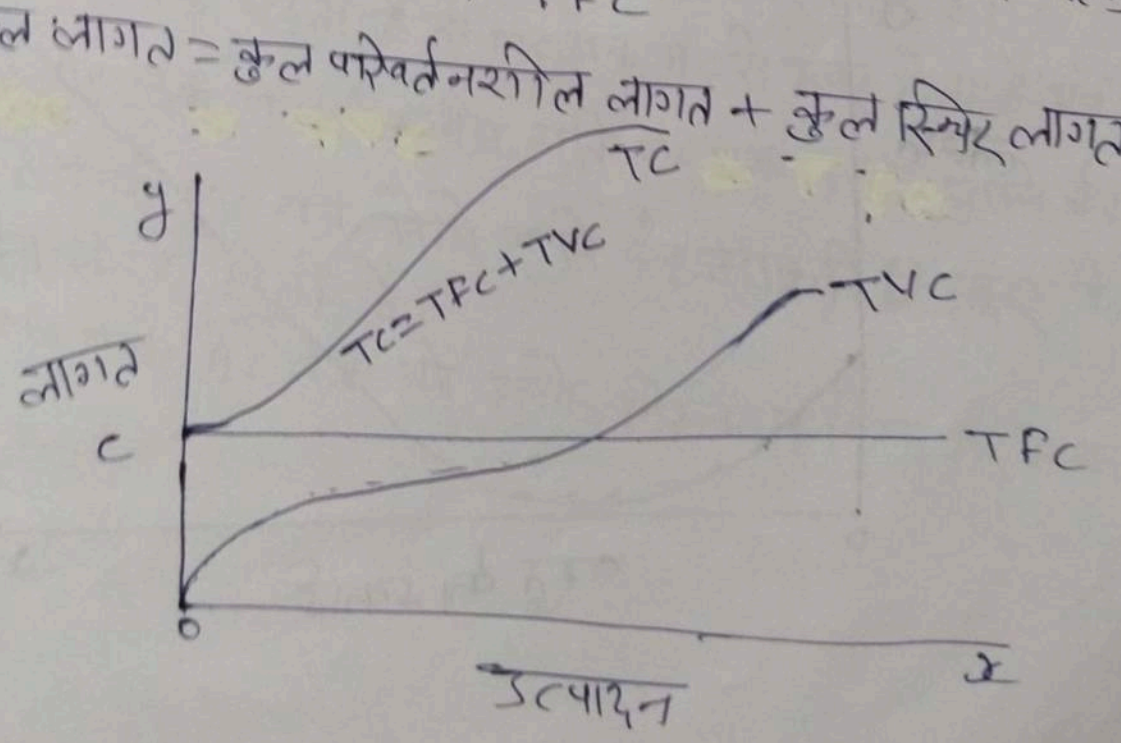

सीमान्त लागत (Marginal cost)

एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन करने से कुल लागत में जितनी वृद्धि होती है उसे उस इकाई विशेष की सीमान्त लागत कहा जाता है अर्थात सीमान्त लागत से आशय कुल लागत में परिवर्तन की उस मात्रा से है जो एक अतिरिक्त इकाई के उत्पादन के फलस्वरूप हो। उदाहरण यदि 100 वस्तुओं का कुल उत्पादन लागत 1000 रु० है और यदि उसी वस्तु की एक और इकाई के उत्पादन से कुल लागत बढ़कर 1009 रुपया हो जाय तो उस अतिरिक्त इकाई का सीमान्त लागत होगी ?

$$MC_n = TC_n - TC_{n-1}$$

सूत्र MC_n = nवीं इकाई का सीमान्त लागत
TC_n = nवीं इकाई की सीमान्त
TC_{n-1} = (n-1) इकाइयों की लागत कुल लागत

$MC_n = 1009 - 1000$

$MC_n = 09$ होगा।

सीमान्त लागत उत्पादन में इकाई परिवर्तन के फलस्वरूप कुल लागत के परिवर्तन को व्यक्त करती है।

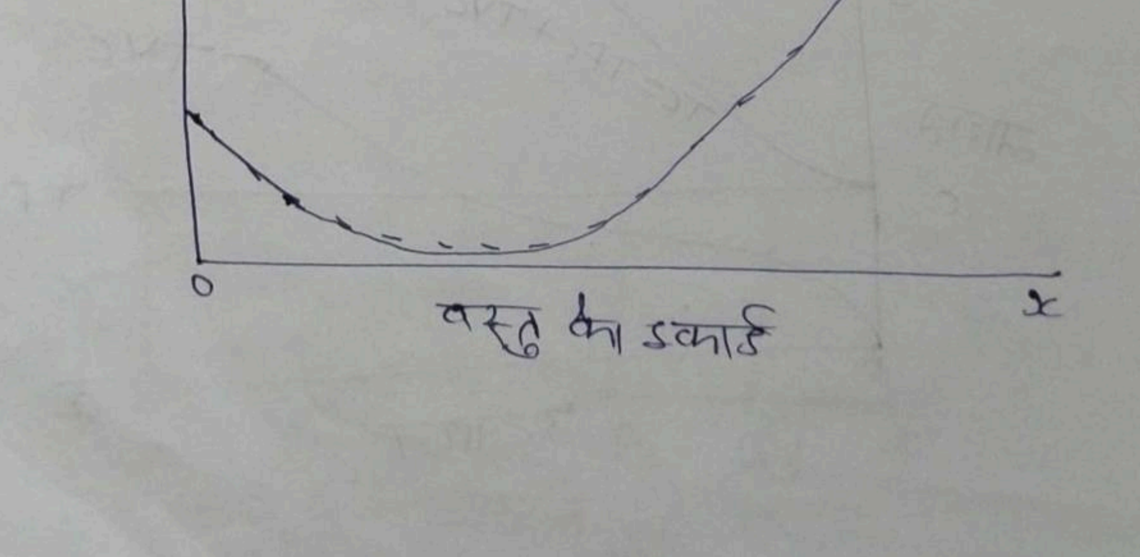

औसतलागत एवं सीमान्त लागत में सम्बन्ध
(Relation Between Average cost and Marginal cost)

* दोनो की गणना उत्पादन की कुल लागत द्वारा की जाती है।

$AC = \frac{TC}{Q}$

$MC = TC_n - TC_{n-1}$

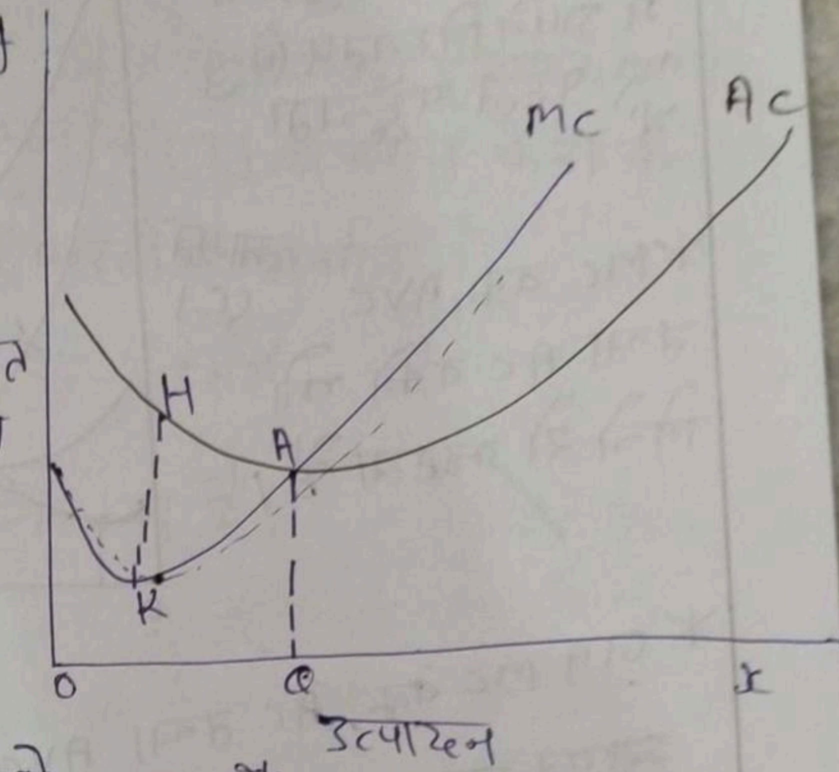

* आरम्भ में जब AC वक्र गिरता है तब MC वक्र एक सीमा तक गिरता है किन्तु एक अवस्था के बाद MC वक्र बढ़ना आरम्भ हो जाती है यद्यपि AC वक्र गिरता रहता है। इसदशा में MC सदैव घटती औसतलागत दशा में AC से कम होता है।
* जब AC न्यूनतम होता है तब MC वक्र AC वक्र को निचे से काटता है अर्थात बिन्दु A पर न्यूनतम औसतलागत सीमान्त लागत के बराबर होता है।
* जब AC वक्र बढ़ता है तो MC वक्र AC से ऊपर होता है एवं साथ ही साथ AC वक्र से तीव्र गति MC वक्र ऊपर जाने की होती है
* AC तथा MC वक्र दोनो वक्रो की आकृति U अक्षर के आकार की तरह होती है।
* MC वक्र AC वक्र को उसके निम्नतम बिन्दु पर A काटता है।

MC वक्र का AVC से सम्बन्ध
(Relation of MC curve with AVC)

* MC वक्र AC तथा AVC वक्रो की तुलना में अपने निम्नतम बिन्दु पर पहले पहुँचता है।

* MC वक्र, AVC तथा AC वक्रो को निचे से काटता हैं।

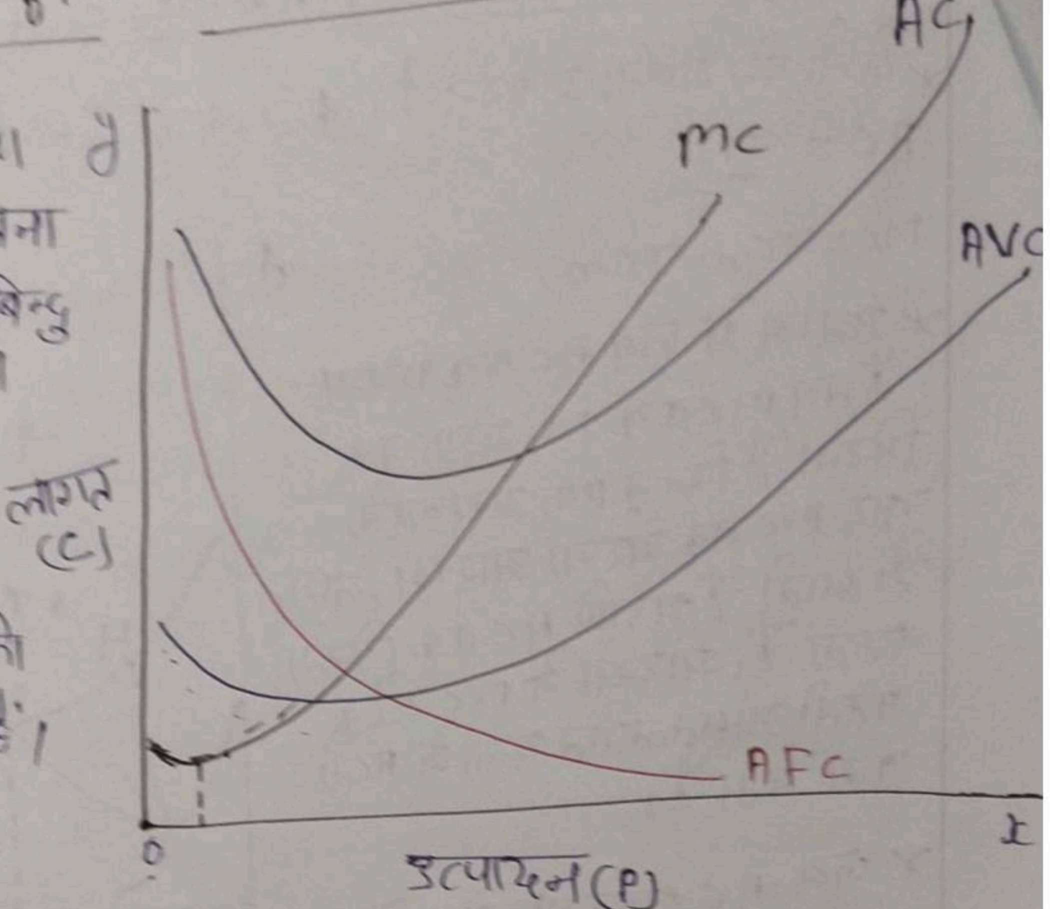

* जब MC वक्र, AC तथा AVC वक्रो से नीचे रहता हैं तब इसका आशय AC तथा AVC दोनो घट रहे हैं इसके विपरित जब MC वक्र, AC तथा AVC वक्रो के ऊपर रहता हैं तब इसका अर्थ AC तथा AVC बढ़ रही हैं।
* MC वक्र, AC तथा AVC वक्रो को उनके निम्नतम बिन्दुओं पर काटता हैं।
* इसप्रकार जब AC गिर रहा होता हैं तब MC वक्र उससे अधिक तेजी से गिरता हैं और AC वक्र के निचे रहता हैं, जब AC वक्र ऊपर उठ रहा होता हैं तब MC वक्र उससे तेजी से उठकर AC वक्र से ऊपर रहता हैं जब AC वक्र न्युनतम पर होता तब AC = MC के होता है।
* AC, MC, AVC वक्र का आकार U आकार का जबकि AFC का आकार परवलय (Hyperbola) का होता है।

लागत फलन (Cost function)

किसी वस्तु के उत्पादन में प्रयोग होने वाले समस्त उत्पत्ति के साधनो को दिया जाने वाला भुगतान उत्पादन लागत कहलाता है किसी उत्पादन क्रिया में लागत (C), उत्पादन की मात्रा (Q), उत्पादन की तकनीक (T), उत्पादन के साधनो की कीमत (P_F) आदि पर निर्भर करती है अर्थात

$$C = f(Q, T, P_F ---)$$ इसमें

C = लागत जो स्वतंन्त्र चर है।

Q = मात्रा

T = तकनीक

P_F = साधनो की कीमत

Q, T, P_F आदि स्वतंन्त्र चर है यदि उत्पादन को छोड़कर अन्य स्वतंन्त्र चरो को स्थिर मान लेते है लागत फलन $C = f(Q)$ के रूप में व्यक्त किया जा सकता है $C = f(Q)$

कुल आगम (Total Revenue)

**

किसी विक्रेता को वस्तुओं की बेची गयी कुल मात्रा से जो मुद्रा प्राप्त होती है वही उन वस्तुओं के विक्रय से उसकी कुल आय या कुल आगम कहलायेगी।
अर्थात आगम से आशय उस विक्रय राशि से है जिसे फर्म अपना उत्पाद बेचकर प्राप्त करती है।

कुल आगम = कुल विक्री इकाइयां × प्रति इकाई कीमत

$$TR = Q \times P$$

कुल आगम (TR) की मात्रा, वस्तु की बेची गयी मात्रा (Q) तथा उसके प्रति इकाई मूल्य (P) पर निर्भर करेगी। किसी फर्म द्वारा अर्जित कुल आय वस्तु की बेची गयी मात्रा की वृद्धि के साथ बढ़ती जाती है और वस्तु की बेची गयी मात्रा में कमी के साथ घटती जाती है।

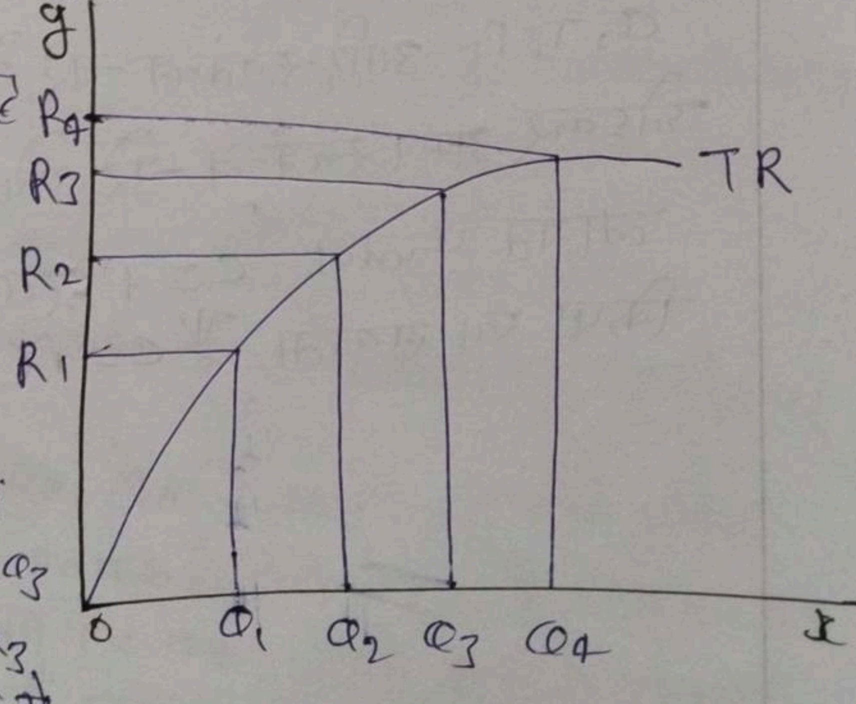

चित्र में TR कुल आय वक्र है जो दर्शाता है कि वस्तु की मात्रा की वृद्धि की तुलना में कुल आय में वृद्धि अपेक्षाकृत कम है जब वस्तु की मात्रा में वृद्धि Q_1Q_2 की होती है तो TR में वृद्धि R_2R_1 है जब वृद्धि Q_2Q_3 की होती है तो TR में वृद्धि R_2R_3 की है और जब Q_3Q_4 की है तो कुल आगम में वृद्धि R_3R_4 की है।
अर्थात उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ उत्तरोत्तर आय में कमी देखी जाती है।

औसत आगम Average Revenue AR)

कुल आय किसी फर्म की कुल विक्रय प्राप्तियों को प्रदर्शित करता हैं जबकि औसत आगम बेची गयी वस्तु के प्रति इकाई पर प्राप्त होने वाली औसत आय(AR) को प्रदर्शित करता हैं इस प्रकार यदि कुल आय को वस्तु की बेची गयी मात्रा से भाग दे दे तो जो भागफल प्राप्त होगा जिसे औसत आय(AR) कहा जाता हैं

$$\text{औसत आय} = \frac{\text{कुल आय}}{\text{वस्तु की बेची गयी मात्रा}}$$

$$AR = \frac{TR}{Q}$$

$$AR = \frac{Q \times P}{Q}$$

$AR = P$ अर्थात औसत आय(AR) = मूल्य(P)

$AR = P$

फर्म या विक्रय इकाई के लिए जो प्रति इकाई प्राप्त होने वाली आय या औसत आय(AR) हैं वही उपभोक्ता की दृष्टि से प्रति इकाई दिया जाने वाला मूल्य हैं

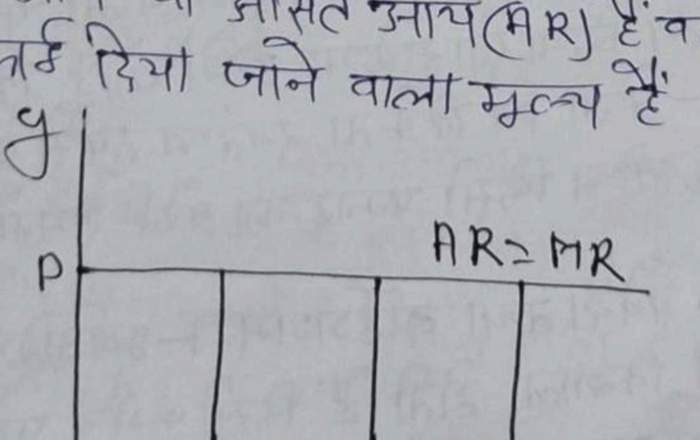

पूर्ण प्रतियोगिता में AR वक्र आधार अक्ष के समान्तर होता हैं जबकि एकाधिकार या अपूर्ण प्रतियोगिता में AR वक्र बाये से दाये निचे की ओर गिरता हुआ होता

पूर्ण प्रतियोगिता का अर्थ एवं विशेषता
Meaning of the Perfect Competition and Characteristics

पूर्ण प्रतियोगिता बाजार की वह स्थिति होती है जिसमें क्रेताओं तथा विक्रेताओं की संख्या विशाल होती है वस्तुएं समरूप होती हैं, क्रेता तथा विक्रेता को बाजार की पूरी जानकारी होती है परिणाम स्वरूप किसी फर्म का कीमत पर कोई नियन्त्रण नहीं होता है। उद्योग की कुल मांग एवं पूर्ति द्वारा कीमत निर्धारित की जाती है तथा सभी फर्म को वह कीमत स्वीकार करनी पड़ती है। फर्म इस दी हुई कीमत पर अपने उत्पाद की कितनी भी मात्रा बेच सकते हैं इसीलिए पूर्ण प्रतियोगिता की दशा में एक फर्म के लिए उसकी वस्तु की मांग पूर्णतया लोचदार दशा में एक फर्म के लिए उसकी वस्तु की मांग पूर्णतया लोचदार दशा में एक फर्म के लिए उसकी वस्तु की मांग पूर्णतया लोचदार होती है।

विशेषता :-

1- क्रेता एवं विक्रेता की संख्या विशाल होना :- पूर्णप्रतियोगिता में क्रेताओं एवं विक्रेताओं की संख्या अत्यधिक होती है इसलिए अपनी क्रियाओं से कीमत प्रभावित नहीं कर सकता है।

2- वस्तुओं की एकरूपता या वस्तु विभेद का अभाव :- पूर्ण प्रतियोगिता के लिए एक अनिवार्य शर्त है कि उद्योग में आने वाली फर्म सहजातीय वस्तुओं का उत्पादन किया जा सकेगा उनमें कोई विभेद नहीं होगा।

3 स्वतन्त्र निर्णय - क्रेता एवं विक्रेता स्वतंत्र रूप से कार्य करते हैं क्रेता एवं विक्रेता के बीच किसी प्रकार का कोई समझौता नहीं होता है।

4- फर्मों का स्वतन्त्र प्रवेश तथा बर्हिगमन :- पूर्णप्रतियोगिता में उत्पादकों की संख्या विशाल होती है किसी फर्म के प्रवेश एवं बर्हिगमन से कुल उत्पादन तथा मूल्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। फर्म अल्पकाल में असाधारण लाभ, साधारण लाभ एवं हानि प्राप्त कर सकता है लेकिन दीर्घकाल में फर्म केवल सामान्य लाभ प्राप्त करती है।

5- बाजार की पूर्ण जानकारी होना।

6 विक्रय लागतों की ...

पूर्ण प्रतियोगिता में फर्म-उद्योग सम्बन्ध :-

Firm-Industry Relationship under Perfect Competition

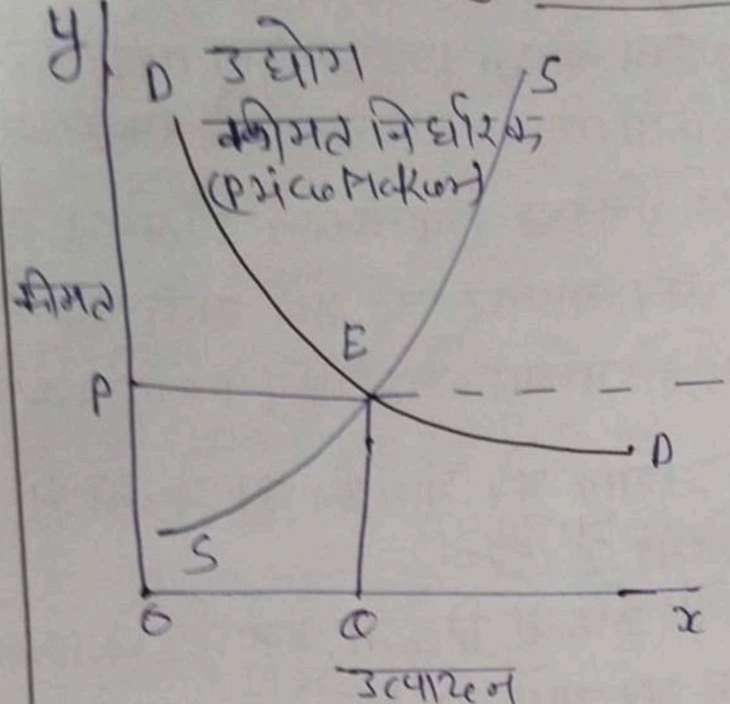

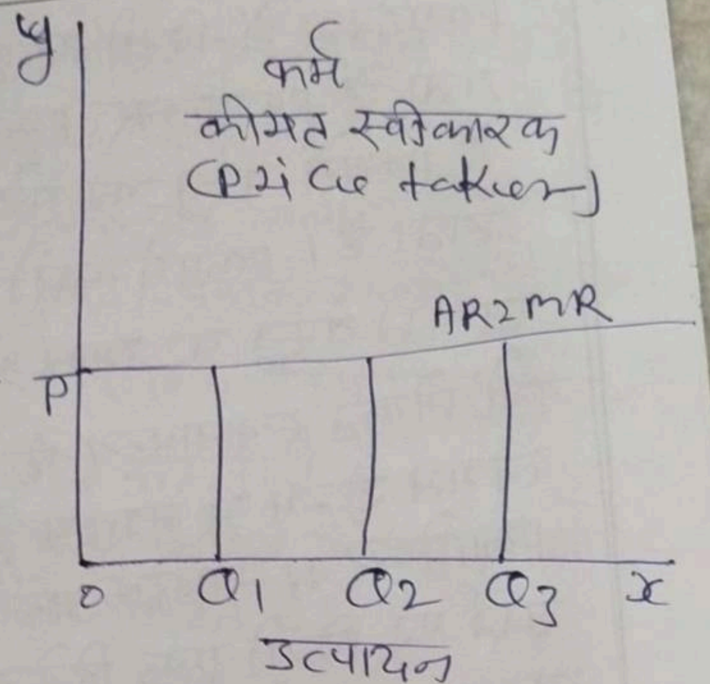

पूर्ण प्रतियोगिता में एक उद्योग के अन्तर्गत कार्य करने वाली प्रत्येक फर्म कीमत प्राप्तकर्ता (Price Taker) तथा मात्रा नियोजक होती है जबकि वस्तु के मूल्य का निर्धारण उद्योग तय करता है जिसे कीमत निर्धारक (Price Maker) कहा जाता है प्रदर्शित चित्र में उद्योग में कीमत का निर्धारण वस्तु की मांग एवं पूर्ति द्वारा निर्धारित की जाती है जहां बिन्दु E पर OP कीमत निश्चित किया जाता है OP मूल्य पर उद्योग के अन्तर्गत कार्य कर रही फर्म कीमत OP दिया हुआ मान लेती है तथा वह इस कीमत पर वस्तु की कितनी भी मात्रा Q_1 ---- Q_n उत्पादन एवं विक्रय कर सकती है यही कारण है कि फर्म के लिए कीमत रेखा x अक्ष के समानान्तर क्षैतिज रेखा (Horizontal Line) होता है जिस पर मांग की लोच अनन्त होती है।

(54) एकाधिकार का अर्थ एवं विशेषता
Meaning of Monopoly and Charact

एकाधिकार में किसी वस्तु का केवल एक उत्पादक एवं विक्रेता होता है। एकाधिकार एक ऐसी बाजार संरचना को स्पष्ट करता है जिसमें वस्तु का कोई निकट स्थानापन्न उपलब्ध नहीं होता है। एकाधिकारी का बाजार पर पूर्ण अधिकार होता है अर्थात वस्तु पर उसका पूर्ण नियन्त्रण होता है। एकाधिकारी में निकट स्थानापन्न के अभाव को मांग की आड़ी लोच लगभग शून्य या नगण्य होती है।
एकाधिकार का शाब्दिक अर्थ है अकेला विक्रेता, ऐसी स्थिति जिसमें पूर्ति पर किसी एक विक्रेता का अधिकार या नियन्त्रण हो। यह बाजार की वह दशा है जिसमें बाजार की पूर्ति का नियन्त्रण पूर्णतया एक व्यक्ति के हाथ में हो। ऐसी स्थिति में उत्पादक ऐसी वस्तु का उत्पादन करता है जिसका कोई नजदीकी स्थानापन्न नहीं होता है यदि कोई नजदीकी स्थानापन्न हुआ तो प्रतियोगिता की स्थिति आ जायेगी। और उस वस्तु की पूर्ति पर उत्पादक का पूर्ण नियन्त्रण नहीं होगा। इस प्रकार प्रतियोगिता की पूर्ण समाप्ति ही एकाधिकार है।

विशेषता :- 1- एकाधिकार की स्थिति में केवल एक ही उत्पादक या विक्रेता होता है।
2 - पूर्ति के ऊपर विक्रेता का पूर्ण नियन्त्रण होता है।
3 नजदीकी स्थानापन्न का अभाव होता है।
4 एकाधिकारी उद्योग में फर्मों के प्रवेश पर रोक।
5 एकाधिकारी में फर्म ही उद्योग है और उद्योग ही फर्म है अर्थात फर्म एवं उद्योग में कोई अन्तर नहीं होता है।
6 एकाधिकार में मूल्य विभेद सम्भव हो सकता है।

प्रो० चेम्बरलिन के अनुसार "एकाधिकारी उसे समझना चाहिए जो किसी वस्तु की पूर्ति पर नियन्त्रण रखता हो।"

55 मूल्य विभेद अथवा विभेदात्मक एकाधिकार
Price Discrimination or Discrimination Monopoly

एक ही नियन्त्रण के अन्तर्गत उत्पादित एक समान वस्तुओं को विभिन्न क्रेताओं को भिन्न-भिन्न कीमत पर बेचने की क्रिया कीमत विभेद कही जाती हैं। अर्थात जब एकाधिकारी एक समान वस्तु इकाइयों को दो पृथक-पृथक स्थानों के भिन्न भिन्न उपभोक्ताओं को भिन्न-भिन्न कीमत पर बेचता है तब उसकी यह क्रिया कीमत विभेद कहलाती है।
प्रो०स्टिगलर के अनुसार "समान वस्तु के लिए दो या दो से अधिक मूल्य प्राप्त करने को मूल्य विभेद कहते हैं।"

कीमत विभेद की शर्ते :-

(i) बाजारो को पृथक रखा जाय – अर्थात दोनो बाजारो के क्रेताओं के मध्य कोई सम्पर्क नहीं होना चाहिए अन्यथा क्रेता एक बाजार में कम कीमत पर वस्तु खरीदकर महंगे बाजार में वस्तु को बेचने लगेगा जिसके फलस्वरूप कीमत विभेद समाप्त हो जायेगा।

(ii) बाजारों में मांग की लोच एक समान नहीं होनी चाहिए। मांग की कीमत लोच विभिन्न बाजारो में भिन्न-भिन्न होनी चाहिए।

कम लोचदार मांग वाले बाजार में ऊंची कीमत पर कम उत्पादन मात्रा की बिक्री। जबकि अधिक लोचदार मांग वाले बाजार में कम कीमत पर अधिक उत्पादन मात्रा की बिक्री।

56 एकाधिकार शक्ति की कोटि एवं माप
(Degree of Monopoly Power and Measurement)

एकाधिकारी स्वयं वस्तु का मूल्य निर्धारित करता है। एकाधिकारी अपनी सौदेबाजी की शक्ति के कारण अधिक लाभ कमाने के उद्देश्य से ऊंची कीमत निर्धारित करके शोषण कर सकता है। एकाधिकारी नियमन की नीति का अध्ययन करने से पूर्व एकाधिकारी शक्ति की कोटि को मापना आवश्यक है।

प्रो० लर्नर, प्रो० ट्रिफिन, श्रीमती जान राबिन्सन ने एकाधिकारी शक्ति की माप की विधियों का उल्लेख किया है। प्रो० लर्नर का माप

$$\text{एकाधिकारी शक्ति कोटि} = \frac{\text{वस्तु की कीमत} - \text{सीमान्त लागत}}{\text{वस्तु की कीमत}}$$

$$DMP = \frac{AR - MC}{AR}$$

श्रीमती राबिन्सन के अनुसार

$$\text{एकाधिकारी शक्ति की कोटि} = \frac{1}{e} = \frac{1}{\text{कीमत सापेक्षता}}$$

अर्थात एकाधिकारी शक्ति तथा मांग की लोच में विपरित सम्बन्ध पाया जाता है इसके अनुसार मांग की लोच जितनी अधिक होगी, एकाधिकारी शक्ति उतनी ही कम होगी तथा मांग की लोच जितनी कम होगी, एकाधिकारी शक्ति उतनी ही अधिक होगी।

मजदूरी का आधुनिक सिद्धान्त
Modern theory of wage

यह सिद्धान्त मजदूरी निर्धारण का महत्वपूर्ण सिद्धान्त है जिस प्रकार वस्तु का मूल्य सीमान्त उपयोगिता और सीमान्त लागत से निर्धारित होता है उसी प्रकार मजदूरी भी श्रमिक की सीमांत उत्पत्ति उसके जीवन स्तर से निर्धारित होती है अर्थात एक उद्योग में मजदूरों की मजदूरी उस बिन्दु पर निर्धारित होती है जहां श्रमिकों की कुल मांग श्रमिकों की कुल पूर्ति के बराबर है।

श्रम की मांग :- उत्पादन के दौरान नियोक्ताओं के द्वारा श्रमिकों की मांग की जाती है श्रमिकों की मांग उस बिन्दु तक बढ़ायी जाती है जहां श्रम की सीमांत उत्पादकता का मूल्य उसको दी जाने वाली मजदूरी के बराबर हो। उत्पादक कभी भी श्रमिकों को उसकी उत्पादकता से अधिक मजदूरी नहीं देगा श्रम की मांग वस्तुओं की मांग पर निर्भर करती है इसीलिए श्रम की मांग व्युत्पन्न मांग कहते हैं दूसरा श्रम की मांग अन्य साधनों की प्रकृति पर भी निर्भर करती है।

मजदूरी एवं श्रम की मांग में विपरित सम्बन्ध पाया जाता है।

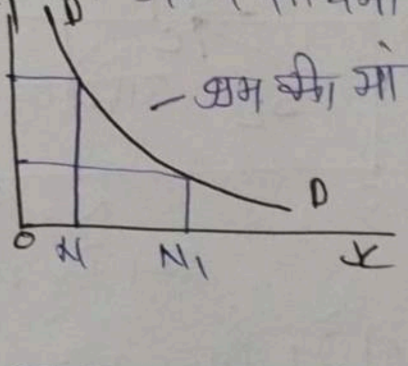

श्रम की पूर्ति :-

श्रम की पूर्ति को दो बातों के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है

1 - विशेष प्रकार के श्रमिकों की संख्या - जो विभिन्न मजदूरी की दरों पर अपनी सेवाओं को देने को तैयार रहते हैं

2 - श्रम का सीमान्त त्याग :- श्रमिक अपना श्रम बेचते समय इस त्याग की मात्रा को अवश्य ध्यान रखेगा श्रम के त्याग की न्यूनतम सीमा श्रमिक के जीवन स्तर को बनाये रखने के लिए पर्याप्त मुद्रा के बराबर होगी कोई भी श्रमिक स्थायी रूप से उससे कम मजदूरी लेना पसन्द नहीं करेगा। श्रम की पूर्ति एवं मजदूरी में प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है।

(58) अर्थात कम मजदूरी पर कम श्रमिक कार्य करना पसंद करेगा। अधिक मजदूरी पर अधिक श्रमिक कार्य करेगा।

श्रमिक की पूर्ति अनार्थिक एवं आर्थिक तत्व दोनों मजदूरी प्रभावित करती हैं।

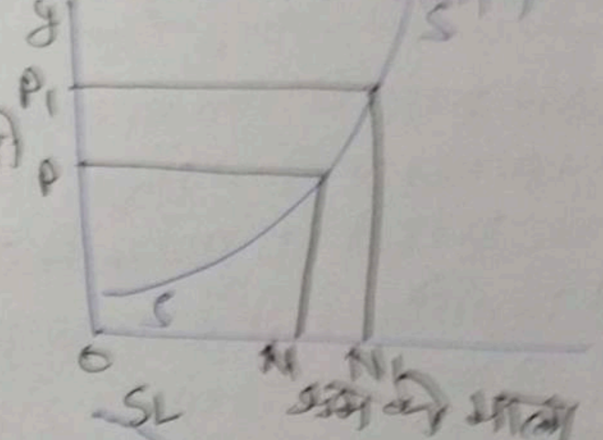

मजदूरी निर्धारण

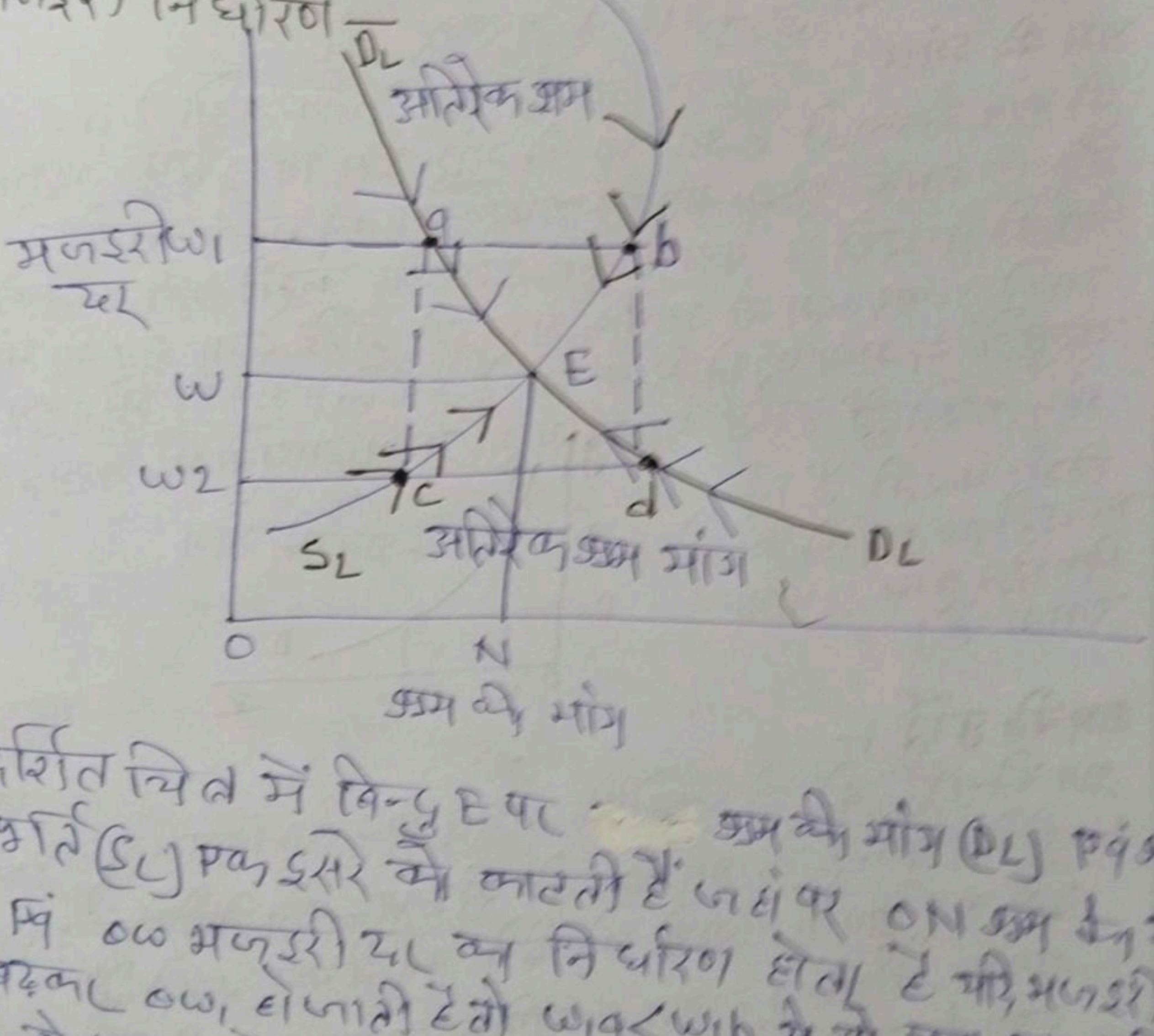

प्रदर्शित चित्र में बिन्दु E पर श्रम की मांग (DL) एवं श्रम की पूर्ति (SL) एक दूसरे को काटती हैं जहां पर ON श्रम की मांग एवं OW मजदूरी दर का निर्धारण होता है यदि मजदूरी बढ़कर OW1 हो जाती है तो W1a < W1b से तो यहां श्रम अतिरेक हो जाता है इसी प्रकार यदि मजदूरी गिरकर OW1 हो जाती है तो श्रम की मांग W2d > W2c की अपेक्षा श्रम की मांग अधिक हो जाती हैं इस प्रकार बिन्दु E पर OW मजदूरी एवं ON श्रम की मांग का निर्धारण होता हैं।